RNI NO. JHAHIN|2017|73875

DECEMBER 2022

GRIHASWAMINI

International e-magazine

Special Edition On

Divya Mathur

www.grihaswamini.com.

गृहस्वामिनी की टीम

DIVYA MATHUR SPECIAL ISSUE

ARPANA SANT SINGH
editor-in- chief

SHIKHA VARSHNEY
guest editor

DECEMBER 2022 ISSUE

मार्गदर्शक मंडल
ममता कालिया
उषा किरण खान
दिव्या माथुर (ब्रिटेन)
डॉ सी भास्कर राव
नीरजा राजकुमार
डॉ अमिता प्रसाद

संरक्षक
डॉ जूही समर्पिता
पूर्वी घोष

संपादक
अर्पणा संत सिंह

कोषाध्यक्ष
बबिता केडिया

संपादक मंडल
इला प्रसाद(अमेरिका)
शैल अग्रवाल(ब्रिटेन)
शार्दुला नोगजा(सिंगापुर)
हरिहर झा (ऑस्ट्रेलिया)
रेखा रघुवंशी (ऑस्ट्रेलिया)
कादंबरी मेहरा(ब्रिटेन)
अर्चना अनुप्रिया (भारत)
रानी सुनीता(भारत)

प्रूफ रीडिंग संपादक
रीता रानी(हिंदी)
बबिता केड़िया (अंग्रेजी)

विधि सलाहकार-डॉ मुकेश कुमार मालवीय

ग्लोबल एम्बेसडर
मंजू श्रीवास्तव(अमेरिका)
सारिका फलोर (केन्या)
शालिनी वर्मा (कतर)
डॉ श्वेता सिन्हा (अमेरिका)
ललिता चौहान (तंजानिया)
डॉ शिक्षा गुजाधुर (मॉरीशस)
अश्विनी केगावंकर (नीदरलैंड)
अनु बाफना (यूएई)

सोफिया स्केलिडा- ग्रीस
-नाइजीरिया
एलिसिया मारिया कुबेरस्का-पोलैंड
डेलो इसुफी- अल्बानिया
मारा वेनुतो- इटली
लिला लैटस - पोलैंड
रानिया एंजेलकौडी- यूनान
करीना सिलवाना क्रैन-अर्जेंटीना
मार्लीन पासिनी-मेक्सिको
डॉ अप्रिलिया ज़ैंक- जर्मनी
रिनी वेलेंटीना -इंडोनेशिया
इजाबेला जुबको - पोलैंड
एलिसा मस्किया-इटली
बारबरा ओरलोव्स्की - जर्मनी
मुनीर मेज़ीद- रोमानिया
तुर्कान एगोर-तुर्की
रोजालिया अलेक्जेंड्रोवा- बुल्गारिया
मैरी लिन लुइज़- फ्लोरिडा, यूएसए
डॉ दिमित्रिस पी. क्रैनियोटिस- ग्रीस
अन्ना फेरेरियो- इटली

नेशनल एम्बेसडर
सपना एहसास (दिल्ली)
मंजू भारद्वाज (तेलंगाना)
प्रियंका सिंह (उत्तर प्रदेश)
कुमुद रंजन झा (एनसीआर)
रजनी दुर्गेश (उत्तराखंड)
रानी सुनीता (बिहार)
सारिका भूषण (झारखंड)
सीमा भाटिया (पंजाब)
शिल्पा जैन (चेन्नई)
सोनिया अक्स (हरियाणा)
तृप्ति मिश्रा (मध्यप्रदेश)
उर्मिला देवी (छत्तीसगढ़)

कम्युनिकेशन डाइरेक्टर
तृप्ति मिश्रा (भारत)
मंजू श्रीवास्तव (अमेरिका)
सारिका फलोर (केन्या)
सारिका भूषण (भारत)

Contact Us:
grihaswaminimagazine@gmail.com

WWW.GRIHASWAMINI.COM

अनुक्रमणिका

संपादकीय-शिखा वार्ष्णेय	1
Virendra Sharma	2
Greetings - The Baroness Flather	3
Divya - name of determination- Edward Crask	4
I'd rather learn from one bird how to sing: Divya Mathur - Yogesh Patel MBE	5
"Aashaa: Hope- Zerbanoo Gifford	6
प्रवासी महिला साहित्यकार और स्त्री चेतना - दिव्या माथुर	7
पूर्व पक्ष -डॉ कमल किशोर गोयनका	8
दिव्या माथुर की कहानियों में संवेदना और शिल्प- डॉ अरुणा अजितसारिया एम.बी.ई	9
देसी गर्ल्स - लेडी मोहिनी कैंट नून	10
झूठ झूठ और झूठ -झूठ के माध्यम से सच की तलाश -तेजेन्द्र शर्मा	11
कर्मयोगिनी दिव्या माथुर- शैलजा सक्सेना	12
विरोधाभास की विलक्षणता :दिव्या माथुर -आस्था देव	13
जहरमोहरा :उर्दू में अनुवादित दिव्या माथुर का कहानी संग्रह -डॉ अर्जुमंद आरा	14
जिंदगी के रहस्य समेटे है"तिलिस्म"- प्रो. राजेश कुमार	15
यथा नाम तथा गुण -डॉ बीना शर्मा	16
दिव्या जी को जितना मैंने जाना -डॉ संध्या सिंह	17
घर से चलकर पूरी दुनिया तक की यात्रा हैं- दिव्या की कहानियां- डॉ. मनोज मोक्षेंद्र	18
दिव्या माथुर:मेमेन्तो मोरी-ल्युदमीला खोख्लोवा	19
दिव्या माथुर की कविताओं में मानवीय चेतना के संघर्षों की आंच -कल्पना मनोरमा	20
दिव्या माथुर की संपादकीय प्रतिभा-तितिक्षा दण्ड वाह	21
"दिव्या माथुर का 'आक्रोश' - रूपर्ट स्नैल	23
जब आप जंग पे निकली थीं,अस्पताल को- पद्मेश गुप्त	24
वह ध्रुव है!-पुष्पा बालकृष्ण	25
दिव्या माथुर की रचनाओं पर प्रतिष्ठित लेखकों की चुनिंदा प्रतिक्रियाएं	26
हिंदी की दुनिया, दुनिया में हिंदी - प्रो फ़्रंचेस्का ऑर्सीनी	29
दिव्या -मानवीय संवेदना और हिन्दी साहित्य की-अर्पणा संत सिंह	30

शिखा वार्ष्णेय

संपादकीय

“दिव्या”

जिजीविषा – यदि इस शब्द की व्याख्या करने के लिए मुझसे कहा जाए तो मैं एक शब्द में कर सकती हूँ “दिव्या”।

मैं जब पहली बार उनसे मिली थी, एक दुबली-पतली नाज़ुक सी दिखने वाली काया पर जो चेहरा था उस पर साफ़ साफ़ शब्दों में यही लिखा हुआ था ‘जिजीविषा’ और आज लगभग 15 साल बाद भी जब मैं उस चेहरे को देखती हूँ, मुझे यही शब्द लिखा हुआ दिखाई पड़ता है। यूँ संघर्ष हर एक के जीवन में होते हैं और उनसे गुजर कर अपना जीवन भी हर कोई अपनी क्षमता और स्वभाव के अनुसार जीता है। परन्तु संघर्षों को घोल कर अपनी प्रतिभा, मेहनत और नीयत से सार्थक, मुस्कुराते हुए जीवन में बदल देने का नाम दिव्या माथुर है।

मुझे याद है उनसे मेरी पहली मुलाकात लन्दन के नेहरू सेंटर में हुई थी। जहाँ वे प्रोग्राम डायरेक्टर के पद पर आसीन थीं। उस दिन मेरा लन्दन में होने वाली साहित्यिक गतिविधियों से भी प्रथम परिचय था और उस स्थान से भी। कार्यक्रम की व्यस्तताओं के वावजूद इधर से उधर भागती, व्यवस्था करती एक मनोहर स्मित से सबका अभिवादन और स्वागत करती इस चलती-फिरती ऊर्जा ने मुझ अनजान कनिष्ठ को तत्काल उस कार्यक्रम में हिस्सा लेने के लिए आमंत्रण दे डाला था।

हर छोटे–बड़े के साथ मिलकर काम करने का और नवांकुरों को प्रोत्साहित करके उन्हें अवसर प्रदान करने की उनकी आदत – शायद यही वजह रही कि जब उन पर आधारित गृहस्वामिनी के विशेषांक के संपादन का भार मुझे सौंपा गया और मैंने दिव्या माथुर पर आधारित सामग्री के लिए लोगों से संपर्क करना शुरू किया तो हर वरिष्ठ, कनिष्ठ, स्थापित, युवा, लेखक, साहित्यकार और नामचीन व्यक्ति ने न सिर्फ तुरंत प्रसन्नता से हामी भरी बल्कि शीघ्र ही उचित सामग्री प्रेषित कर आभार भी जताया।अपने भाषा-साहित्य सर्कल और अपनी मित्र मंडली में दिव्या माथुर एक ऐसी शख्सियत के रूप में पहचानी जाती हैं जो ऊर्जा का साक्षात ध्रुव तारा है। लेखन, संपादन, कला आदि न जाने कितनी असाधारण और बहुमुखी प्रतिभा का भण्डार हैं। असंख्य शीर्ष उपलब्धियों और पुरस्कारों के अलंकारों से सुसज्जित होकर भी उनके सरल स्वभाव में विनम्रता और चेहरे पर दिव्य मुस्कान खिली रहती है।

दिव्या माथुर के रचना संसार पर टिप्पणी करने के लिए मेरा कद काफ़ी छोटा है पर फिर भी इतना जरूर कहूँगी कि उनकी कविताएँ हों या कहनियाँ, यथार्थ के ठोस धरातल से निकलती जरूर हैं पर सीधा पाठक के हृदय तल पर उतर जाती हैं। बिना किसी भी “वाद”, अतिशयोक्ति या अवांछित शब्द प्रयोग किये वे अपनी रचनाओं में बेहद ज़रुरी मुद्दे उठाती हैं और बेहद शालीनता एवं भावात्मक तरीके से शब्दों में ढालकर उसे पाठकों के समक्ष परोस देती हैं। उनकी रचनाएँ पाठकों के दिल और दिमाग पर गहरा असर करती हैं।

~

मैंने हाल में ही दिव्या माथुर का नवीनतम कहानी संग्रह ‘करोना चिल्ला” पढ़ा। संग्रह की अधिकांश कहानियाँ ऐसी हैं, जिनसे कोई भी अपने आपको रिलेट कर सकता है। एक के बाद एक कहानियाँ पढ़ते चले जाते हैं और उनका शिल्प, भाव आपको अपनी जकड़ में लेता जाता है। किताब तब तक उठाकर नहीं रख सकते जब तक वह समाप्त न हो जाये।कहानियाँ पढ़ने के बाद पाठक काफी समय तक उनमें व्याप्त विषयों के बारे में सोचता रहता है।

पत्रिका के इस अंक में मैंने दिव्या माथुर के इसी बहुआयामी व्यक्तित्व को समेटने की चेष्टा की है। इस यज्ञ में अपनी रचनाओं के द्वारा सहयोग करने वाले सभी गुणीजनों, साहित्यकारों, लेखकों, शिक्षकों की मैं तहे दिल से आभारी हूँ।

बहुत बहुत आभार - पुष्पा बाल कृष्ण, बैरोनेस फ्लैदर, ब्रिटिश एम.पी. वीरेंद्र शर्मा, एडवर्ड क्रास्क, डॉ कमल किशोर गोयनका, डॉ. पद्मेश गुप्त, तेजेंद्र शर्मा, एम.बी.ई., प्रो ल्युदमिला खाख्लोवा, योगेश पटेल, फ्रांसेस्का ओर्सिनी, डॉ रुपर्ट स्नेल, ज़रबानू गिफ्फोर्ड,डॉ बीना शर्मा, डॉ अरुणा अजितसरिया, एम.बी.ई., डॉ राजेश कुमार, तितिक्षा दंड-शाह, डॉ शैलजा सक्सेना, डॉ संध्या सिंह, डॉ विजय शर्मा, कल्पना मनोरमा, डॉ आरजूमंद आरा, मोहिनी नून-कैंट, डॉ. मनोज मोक्षेंद्र, आस्था देव आदि सभी रचनकारों की जिन्होंने अपने रचनात्मक सहयोग से इस अंक को समृद्ध किया और दिव्या माथुर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विविध आयाम हमारे पाठकों के समक्ष रखे।

गृहस्वामिनी पत्रिका का यह विशेष अंक पाठकों को समर्पित करते हुए मुझे अपार हर्ष और गर्व की अनुभूति हो रही है। आशा है आप सभी को दिव्या माथुर पर आधारित यह विशेषांक पसंद आएगा। समस्त शुभकामनाओं सहित।

Virendra Sharma MP
Member of Parliament for Ealing, Southall
House of Commons, SW1A 0AA
020 8571 1003
sharmav@parliament.uk

9th December 2022

Divya Mathur

It gives me the greatest pleasure to write in praise and support of Ms Divya Mathur. In a long career, of many phases, full of success, collaboration, culture and literature, Ms Mathur has repeatedly set herself more demanding challenges, and on each occasion, risen to them, overcoming the barriers she has faced.

Ms Mathur believes in making a difference to the world so that it may benefit generations to follow. She is a keen student of the Literature, a talented author, lyricist, poet and academic, she continues to work diligently for the good of society. In her career as the senior and respected officer of The Nehru Centre in London for about 25 years, she has touched the lives of thousands and inspired many to appreciate writing in all its forms and follow her into the study of this important linguistic, cultural and literary heritage.

Founder of Vatayan-UK, Ms Mathur has displayed her love not only for Hindi and English but also all Indian regional languages, Indian art and culture, she has taken it upon herself to drive this forward through her programming. Even during the most difficult times of the pandemic she brought people together virtually to celebrate authors, bringing together world leaders on the topics at hand, shared advice and experience from around the globe. These same events which were possible in person before covid-19 were opened to new audiences. To hold 135 weekly events, and without fail, during the pandemic once again proves her potential for which she was once honoured by the Arts Council of England.

That Ms Mathur is being recognised with this special edition of the prestigious magazine, Grihaswamini, for the excellent work she has done and continues to do, is a matter of pride for all of us and I for one am most delighted. The many awards she has so deservingly won is a testament to the importance of her own work, and the works she celebrates and makes more accessible to others. She truly deserves to be recognised and I wish her the best in life and her future endeavours, and look forward to reading more of her work, and joining many more of her events for many years to come.

Best wishes,

VSharma.

Virendra Sharma MP

Constituency Office:
112A The Green, Southall, UB2 4BQ, 020 8571 1003 and sharmav@parliament.uk
www.virendrasharma.com

Greetings

I am delighted to put on record that I have known the founder of Vatayan, Divya Mathur for over 35 years now. Thanks to her that we have had thousands of meaningful, wonderful, and successful events - first at The Nehru Centre and other reputed venues and since Lockdown, Online, mostly without any institutional and financial assistance.

It's overwhelming that not only UK's, but world's most glitterati and literati have also participated in Vatayan's programmes, which are creative, well managed and well attended.

I feel proud of to be Vatayan's Trustee and Divya's friend.

The Baroness Flather
House of Lords-London

Divya

another name of determination

I have known Divya for more than 25 years and have observed her quiet determination to do good in~ this world by promoting cultural understanding between mainstream British society and the British south Asian community. Not in a brash trumpet-sounding way, but quietly, usually behind the scenes, without any expectation of reward or recognition. That she receives recognition from those who benefit from her good work is testimony to the respect and affection held by those who have had the good fortune to work closely with her.

Having arrived in the UK some decades ago, in inauspicious circumstances, Divya set about making things happen. She volunteered straight away with the Kerala Foundation for the Blind serving as an executive member to improve lives by fundraising and determining the direction of the charity's work. The need for these activities became obvious to Divya through her former professional work in the Department of Ophthalmology in Delhi. This early charity work has led Divya into many more areas of volunteering - Heather Club for Dementia and the Herts Vision.

Divya's big area of interest has been in literature and the arts and she has been outstanding in these fields, forming Vatayan in 2003 to bring to notice authors from the British south Asian community. She has been recognised as an effective provider by the Big Lottery receiving an Awards for All grant to assist in work that she personally designed and implemented. A whole host of south Asian literary and cultural organisations have benefited through her unstinting work and organisation to make things happen.

Divya has also published over 18 books but the area of literary work she is passionate about is improving the lives and recognition of women writers. She puts others forward rather than hog the limelight herself. That characterises Divya more than anything else – she just quietly gets on and makes a difference.

I have often asked her why her anthologies are solely stories by women and why her events have often more women speakers? Her answer has always been that women continue to work much harder than men to qualify for equal recognition. Women are too often subjected to prejudice, violence, and less wages than men. She has this burning desire to do something about it; that's admirable. Cancer and Pandemic didn't deter her from doing what she does best and since the lockdown, Divya has organised over 132 literary weekly events besides collaborating with sister organisations for many more.

I am proud to be a friend and an admirer. Wishing her the very best.

EDWARD CRASK

Social historian,teaches at Open University and is a Labour party consultant.

I'D RATHER LEARN FROM ONE BIRD HOW TO SING: DIVYA MATHUR

The influence of Divya Mathur's contributions is instantly recognizable by the list of her works, a significant number of events she has organized to promote others, and awards and honours she has received. To crown all this, she has received a major accolade from the President of India in recognition of her multi-faceted impact on literature. Through Vatayan she founded in 2003, she has awarded and given a platform to many hitherto lesser-known writers, brought diverse voices from Hindi, Urdu, Panjabi, and English on one stage. Her anthologies, from Odyssey, Aashaa, Desi Girls, Ik safar sath saath: stories by Indian women settled abroad to Native scents, poems in translation from Hindi, Punjabi and Urdu, funded by the ACE, have launched numerous diaspora writers in the West. Her own prolific output of novels, poetry and story collections has explored the meaning of what is it to be an eternal traveller - an outsider - in country, that is her home. Through them, she has also tried to give a meaning to what is missing from our identity as migrant settlers or as a nation.
Divya is not rich but funds her projects from what little she has! Unusually too, she hardly takes a centre stage. Such selfless devotion and commitments to her cause are genuinely stemming from the desire to help others. Yet, her own life story is full of struggles. Every time I have seen her surrounded by the great, I have observed them taken by Divya's humble traits and keenly willing to join in her quest. From the celebrated to unknown writers, poets, artists, dancers, and musicians, all have enjoyed the opportunities she has created for them.
Everything about her is inspirational and exemplary; an unassuming soul. How does one begin to collate the actions including hundreds of events she has organised at various venues, including SOAS, London University, JLF-South Bank, The Nehru Centre, Keats House, Bhavan, RSC and the House of Lords!

Let me sum this up with E. E. Cummings' following lines:
I'd rather learn from one bird how to sing
than teach ten thousand stars how to dance.

Divya's life is about this singing, but not teaching others anything, except creating a perfect example of an extraordinary character.

By Yogesh Patel MBE

Poet, Editor, Recipient: Freedom of the City of London

AASHAA : HOPE

Zerbanoo Gifford

Author, philanthropist and the Founder of The Asha Foundation

I am delighted to have Divya as one of my precious friends. I had the privilege to introduce her outstanding collection of short stories, Aasha: Stories by the eminent Indian Women Writers. Dedicated to Shivani, to many this book represents hope; to others it symbolizes divine justice and the righteous way. It should come as no surprise that the stories in this compelling book are at the same time diverse, yet interconnected and vital.

Some of the stories demonstrate delicacies of Indian families (Mausi: Shivani); some of family honour (Cursed Souls: Chitra Mudgal, pretense of independence (The Hero, The Villain, The Clown: Mannu Bhandari); toilet humour (Foundation Stone: Pratibha Ray); monologue (Are You Listening: Sudha Arora); relationships (Aasha: Divya Mathur), love (The Weed: Amrita Pritam), the greed (Negation: Mridula Garg), death (The Doomsday Has Come: Mehr-un-Nisa Parvaiz, A Woman Is Dead: Sunita Jain; The Warmth of Touch: Mridula Sinha) and future (Aak Egarasi: Alka Saraogi). Each reader will have a personal response to each story. Although fate, family and freedom are interconnected throughout the collection, the common motif is overwhelmingly femaleness. Even in instances where all the characters are male, as in Aak Egarasi

the feminine perspective is represented throughout. It is proclaimed in women's actions and reactions to both life and death. 'Need!' asks one male character in Negation, laughing with biting scorn, 'can you satisfy all my needs?'

I first read them on a train to the Lake District in NW England. I was travelling with my mother and, although she wanted to reminisce, she was happy to share these stories with me. Despite the years between us, we both related to them. Though much has changed in the world, much remains the same, particularly for women! Our lives still revolve around our loved ones. Greater freedom for women has not meant fewer responsibilities or needs.

All great writing drives a reader to re-examine his/her own life and to observe the world with a new eye - this is what I hope you will experience after reading these stories. I hope that this fine collection of short stories will be read by a far-reaching audience who would not ordinarily hear the voices of Indian women. It too should be passed around encouraging conversation and friendly interaction wherever it travels.

A blessing to all its authors and readers alike,

प्रवासी महिला साहित्यकार और स्त्री चेतना

दिव्या माथुर

हिन्दी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर जो मान्यता मिली है उसका एक मूल कारण है प्रवासी भारतीय लेखक, जो एक लम्बे समय से भारत की भाषा, कला और संस्कृति को विदेशों में फैलाने का महत्वपूर्ण प्रयास करते आ रहे हैं। समय तेज़ी से बदल रहा है, ज़ाहिर है कि हमारे साहित्य में भी यह बदलाव, व्याकुलता और बेचैनी छलक रही है जो हिन्दी साहित्य को अपनी मौलिकता से समृध्द कर रही है हालांकि यहाँ बहुत से विद्वान् आज भी यह मानते है कि प्रवासी साहित्य नौस्टेलजिया का ही साहित्य है जैसा कि एक बार स्वर्गीय राजेन्द्र यादव कह गए थे। बिना किसी अध्यनन मनन के, प्रवासी साहित्य को नौस्टेलजिया का साहित्य मान लेना उन्हें आसान लगता है। इसका मुख्य कारण यह भी हो सकता है कि प्रवास में पुरुष लेखकों से कहीं अधिक लेखिकाएं हैं, और महिलाओं की लियाक़त और उपलब्धियों को नज़रअंदाज़ करना बहुत से लेखकों और विद्वानों की प्रवृत्ति रही है।

मैं यह भी मानती हूँ कि बहुत से हिंदी विद्वानों और लेखकों ने प्रवासी साहित्य का गहन अध्ययन किया बल्कि उसे स्थापित करने, उसे उसके मुक़ाम तक पहुंचाने में कोई क़सर नहीं छोड़ी, जिनमें शामिल हैं आदरणीय कमल किशोर गोयनका जी, अनिल शर्मा जोशी जी, रेखा सेठी, इत्यादि, और बहुत सी संस्थाएं और कॉलेजों के हिंदी प्राध्यापक, जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय प्रवासी समारोह आयोजित कर और बहुत से पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्रवासी विशेषांक प्रकाशित कर प्रवासी लेखन का प्रचार और प्रसार किया।

अपने को स्थापित करने में प्रवासी साहित्यकारों भी पीछे नहीं रहे, भारत से निकट सम्बन्ध बनाए रखना, अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों और सालाना पुरस्कार समारोहों के आयोजन, अपनी पुस्तकों का अपने ख़र्चे पर प्रकाशन और लोकार्पण से लेकर सम्पादकों के नख़रे सहने आदि न जाने कितने अथक प्रयत्नों के बाद आज वे इस मुक़ाम पर पहुंचे हैं कि उन्हें कुछ मान्यता मिली है हालांकि बहुतों के लिए दिल्ली अभी भी दूर है किन्तु चेतना जब जगती है तो सब कुछ आसान होना शुरू हो जाता है।इन्हीं प्रयासों के कारण प्रवासी साहित्य का रंग-रूप, उसकी चेतना और संवेदना भारत के हिन्दी पाठकों के लिये अब कोई एक नई वस्तु नहीं रही क्योंकि अब यह माना जाने लगा है कि यह एक नये भाव-बोध का साहित्य है, ऐसा साहित्य जो अपनी मौलिकता एवं नये साहित्य संसार से हिन्दी साहित्य को समृध्द करेगा।

~

प्रवासी साहित्य का रंग-रूप, उसकी चेतना और संवेदना भारत के हिन्दी पाठकों के लिये नई वस्तु है, यह एक नये भाव-बोध का साहित्य है, ऐसा साहित्य जो अपनी मौलिकता एवं नये साहित्य संसार से हिन्दी साहित्य को समृध्द करता है। प्रवासी साहित्य की बुनियाद भारत-प्रेम तथा स्वदेश-परदेश के द्वन्द पर टिकी है।

प्रवास की जद्दोजहद में जिन लेखिकाओं का लेखन छूट गया था, वे भी अब एक नए उत्साह के साथ लिखने/छपने लगीं किन्तु एक लम्बे अर्से तक प्रवासियों का साहित्य मूलतः भारतीय जीवन पर ही आधारित रहा क्योंकि विवाहोपरांत, विदेश में आकर वे अधिकतर ऐसे घैटोज़/बस्तियों में बसीं जहां पर विदेशी न के बराबर थे और संबंधों की व्यापकता के अभाव में उन्होंने वही लिखा जो वे भारत में भोग चुकी थीं या जो वे अपने आसपास देख रही थीं। सालों बाद, उनके लेखन में यदि कोई बदलाव आया भी तो ऐसा कि जैसे एक साथ दो नावों पर सवार होकर लिखना।

वर्तमान में जो लेखिकाएं अच्छा और लगातार लिख रही हैं, उनमें शामिल हैं ब्रिटेन से डॉ अचला शर्मा, शैल अग्रवाल, उषा राजे सक्सेना, नीना पॉल, तोषी अमृता, अरुण सब्बरवाल, कादम्बरी मेहरा, उषा वर्मा और ज़किया ज़ुबैरी और दिव्या माथुर; अमेरिका से डॉ उषा प्रियंवदा, डॉ सुषम बेदी, सुधा ओम ढींगरा, पुष्पा सक्सेना, इला प्रसाद, अंशु जौहरी, अनिलप्रभा कुमार, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, कैनेडा से डॉ स्नेह ठाकुर, डेनमार्क से अर्चना पैन्यूली; और संयुक्त अरब अमीरात से पूर्णिमा वर्मन।

प्रवासी साहित्य की बुनियाद बहुत सालों तक भारत-प्रेम तथा स्वदेश-परदेश के द्वन्द पर टिकी रही किन्तु कुछ सालों से देखने में आया है कि इन लेखिकाओं न केवल नई संवेदना, नया परिवेश, नयी जीवन दृष्टि तथा नये सरोकारों को दर्शाया बल्कि उनकी यह समावेशिता अब वृध्दि, समृध्दि और विश्वास का वातावरण पैदा कर चुकी है। मैं यह दावे के साथ इसलिए कह सकती हूं क्योंकि मैंने प्रवासी महिलाओं की कहानियों के अब तक चार कहानी संग्रह सम्पादित किए हैं: औडिस्सी, आशा, देसी गर्ल्स और इक सफ़र साथ साथ और इन संग्रहों की कहानियां।मेरे पिछले कहानी संग्रह, 'इक सफ़र साथ साथ' में ब्रिटेन, अमेरिका, कैनेडा, योरोप, स्कैंडिनेविया, चीन और अरब आदि देशों की 32 लेखिकाओं की कहानियाँ संकलित हैं, जो विभिन्न पृष्ठभूमियों से आती हैं, जिनके व्यवसाय अलग हैं किन्तु उन्होंने प्रवासी अनुभवों और चुनौतियों की एक वास्तविक टेपेस्ट्री पेश की है, विषयों का एक लंबा चौड़ा स्पेक्ट्रम है - आत्मपरीक्षण-विषयक से लेकर विश्लेषणात्मक अभिव्यक्ति तक, व्यंग्यात्मक, सूक्ष्म प्रहसन से लेकर निहायत ऊटपटांग, प्रतिवाद से आस्था तक एवं सहस्राब्दी के बदलते सामाजित ढाँचो तक, कुछ नहीं छूटा है। कहानियां व्यापक रूप से लेखिकाओं के संघर्ष को जोड़ती हैं।मुख्यधारा प्राधान्यता एवं आलोचनात्मक स्तुति के चलते, यह संग्रह साहित्यिक अथवा समाज शास्त्रियों के लिए दिलचस्प हो सकता है।

मेरे विचार में, अच्छे प्रवासी लेखकों को यदि मुख्यधारा में शामिल कर लिया जाए तो उनका साहित्य निश्चय ही हिन्दी में नई संवेदना, नया परिवेश, नयी जीवन दृष्टि तथा नये सरोकारों का न केवल द्वार खोलेगा। यह समावेशिता वृध्दि, समृध्दि और विश्वास का वातावरण पैदा करेगी।

प्रवासी लेखन में जहां तक चुनौतियों का सम्बन्ध है, उसमें सबसे प्रथम है - बिना परिवेश के साहित्यिक विकास करना। आजकल इंटरनेट से पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध हैं, फेसबुक के माध्यम से संपर्क सुलभ हैं किन्तु अपनी विशिष्टता बनाए रखना आवश्यक है। हमें अपने को पश्चिम का अंधानुकरण करने और भारत के साहित्यिक आंदोलनों का पिछलग्गू बनने से रोकना होगा। भारत में साहित्य में राजनीतिक प्रतिबद्धताएं बहुत हैं - लेफ्ट, राईट, जातिवादी सरोकार, गुटबाज़ी, प्रवासी साहित्य को इस साहित्यिक राजनीति से दूर रहना होगा।

पूर्व-पक्ष

डा. कमल किशोर गोयनका,

(पूर्व प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय, लेखक, समीक्षक, प्रेमचंद और प्रवासी हिन्दी साहित्य के विशेषज्ञ)

दिव्या माथुर से मेरा परिचय लगभग ढाई दशक पूर्व हुआ और इसका श्रेय डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी को है जो उस समय ब्रिटेन के भारतीय उच्चायुक्त थे और हिंदी के प्रचार-प्रसार में सक्रिय थे। दिव्या के दूसरे काव्य संकलन 'ख़याल तेरा' का आमुख उन्होंने ही लिखा था इसलिए वह उनकी काव्य प्रतिभा से परिचित थे। इसी संदर्भ में उन्होंने मुझे दिव्या माथुर के काव्य-संग्रह 'रेत का लिखा' को प्रकाशित कराने की ज़िम्मेदारी सौंपी।

उनके काव्य संग्रह 'रेत का लिखा' की भूमिका में मैंने लिखा था कि दिव्या माथुर किसी एक विषय को केंद्र में रखकर उसके विविध पक्षों तथा रूपों को अपनी काव्यात्मक दृष्टि एवं संवेदना से आत्मसात् करके उन्हें जीवंत शब्दों में अभिव्यक्त करने की क्षमता रखती है; यह उनकी सर्जनात्मक कल्पना की घनीभूतता का प्रमाण है। उनके अन्य काव्य-संग्रहों में भी विषय तथा अनुभूतियों की इसी एकाग्रता का सौंदर्य मिलता है।

दिव्या माथुर की सर्जनात्मक प्रतिभा का उदय यद्यपि कविता से हुआ किंतु आज उनकी पहचान एक वरिष्ठ कहानीकार के रूप में अधिक है। उनकी पहली कहानी 'प्रतीक्षा' थी जो शायद 1965-66 में लिखी गई थी, जो एक बाल-विधवा की त्रासदी की मर्मस्पर्शी कहानी है, जिसमें बिज्जी के दर्दनाक जीवन का उद्घाटन करती है। लेखिका की आयु उस समय 14-15 वर्ष के आसपास होगी, अत: लेखिका की अनुभूति की गहनता तथा सामाजिक सरोकार की दृष्टि को समझा जा सकता है। दूसरी कहानी 'वह काली' थी जिसे दिल्ली विश्वविद्यालय की एक कहानी प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार मिला। लेखिका अपने शर्मीलेपन से पुरस्कार-समारोह में नहीं गई और कुछ समय बाद जब मुख्य अतिथि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना से भेंट हुई, जो लेखिका को ही 'वह काली लडक़ी' समझे बैठे थे तो वे बहुत प्रभावित हुए बिना न रह सके, उन्होंने दिव्या को लेखन जारी रखने की प्रेरणा दी। इसके बाद 'सदा सुहागिन' कॉलेज पत्रिका में छपी जो भारत-पाक युद्ध के समय एक गुमशुदा सैनिक की पत्नी पर होने वाले अत्याचार की कहानी है। फिर उनकी 1972-78 के दौरान 'नवभारत टाइम्स में 'आत्महत्या के पहले' तथा 'आक्रोश' दो कहानियाँ प्रकाशित हुईं और उसके बाद अचानक वे एक लंबे समय के लिए लेखन के पटल से गायब हो गयीं।

दिव्या के पहले कहानी संग्रह 'आक्रोश' में उनकी भारत में लिखी गयी कहानियाँ सम्मिलित थीं, जो उनकी मौलिक गहन-दृष्टि और उनके भारतीय सरोकारों से परिचित कराती हैं। 2010 में 'पंगा' तथा 2011 में '2050' कहानी संग्रहों के प्रकाशित होते ही दिव्या ने प्रवासी कहानीकारों में एक महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया। 'वैलेंटाइंस डे' कहानी है तो भारतीय चरित्रों की किंतु रंगमंच है लंदन, मदन की प्रेमिकाएँ उसके छैलेपन को जान गई हैं, बड़ी मुश्किल से एक पुरानी प्रेमिका उसके साथ शाम गुज़ारने को राज़ी हो जाती है किंतु यह ड्रामा वह अपनी सहेलियों के साथ मिल कर मदन को सबक सिखाने के लिए करती है। 'नीली डायरी' पुरुष की स्त्री को भोगने की चरमावस्था की कहानी है। रमन रिजवान पंद्रह सालों में अठानवें औरतों के साथ सो चुका है। संयोग से उसके पड़ोस में कपूर परिवार की स्त्रियाँ - अधेड़ रीमा, अल्हड़ बेटी ज़ारा तथा नई नवेली बहू स्नेहा - तीनों ही रमन के जाल में फँसने को तैयार हैं।'बचाव' कहानी में इंग्लैंड भागकर गई भारतीय यौवना निंदिया अपने बौस के बलात्कार के प्रयास पर खौलता पानी डालकर भाग खड़ी होती है।

दिव्या माथुर की कहानियों में फैंटेसी की भी अद्भुत प्रवृत्ति है, जो यथार्थ न होकर भी जीवन के किसी अकल्पनीय पक्ष का उद्घाटन करता है। फैंटेसी रचनाकार की दुर्बलता नहीं है, उसकी कल्पनाशीलता का परिणाम है, वह पाठक को एक नए परिदृश्य, एक नई संवेदना तथा एक नए संसार से साक्षात्कार कराती है। 'पुरू और प्राची' एक ऐसी ही कहानी है, जिसमें बीकानेर के एक मारवाड़ी व्यापारी और उसके अमेरिका निवासी पुत्र तथा उसकी विदेशी पत्नी रुडक़ी स्थिति प्राची स्पेस सेंटर के कैपसूल से चाँद की यात्रा करते हैं, जिसके बाद नारायण परिवार का जीवन ही बदल जाता है, व्यापार आसमान छूने लगता है। कहानी मनुष्य की महत्त्वाकांक्षा और लिप्सा का रोचक वर्णन करती है। '2050' में एक ऐसे मानवीय समाज की कल्पना है जहाँ 'हाई आई-क्यू' वाले पति-पत्नी ही संतान पैदा कर सकते हैं, तिस पर प्रवासीय जोड़ों को विदेशी स्पर्म से संतानोपत्ति के लिए बाध्यता। परिषद् पति-पत्नी की भावनाएँ कुचलती है, गर्भपात कराती है, आत्महत्या की अनुमति देती है और विरोध को कुचलती है। कहानी एक फैंटेसी है, किंतु यदि इसके सत्य होने की संभावना है तो यह भयभीत करती है। कहानी की यह फैंटेसी उसे बड़ी कहानी बनाती है। दिव्या माथुर की 'हिंदी@स्वर्ग.इन' कहानी भी एक फैंटेसी है, लेकिन वह दूसरे प्रकार की। इसमें दिव्या स्वयं एक पात्र हैं। वह एक कार दुर्घटना के बाद स्वर्ग पहुँचती हैं।वहाँ उनकी भेंट कमलेश्वर, लक्ष्मीमल्ल सिंघवी, महावीर शर्मा, मनोहरश्याम जोशी, कन्हैयालाल नंदन, प्रभा खेतान आदि से होती है, वाद-विवाद होता है। प्रवासी साहित्य की उपेक्षा पर चोट करती हुई दिव्या कहती हैं,"आप जैसे महान लेखकों के पास समय ही नहीं हम लेखकों को ठीक से पढऩे-सुनने का; एक-आध कहानी और कविता पढक़र अपने को प्रवासी-एक्सपर्ट कहलवाने लगते हैं।" कहानी में नई संवेदना तथा नई तकनीक का प्रयोग है।

एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में एक अलग पहचान को स्थापित करती हुई दिव्या की कहानियों में जीवन का वैविध्य है, सघन संवेदना है और अभिव्यक्ति में प्रेषणीयता है। कहानीकार के रूप में वे भारतीयता एवं भारतीय जीवन-मूल्यों की स्थापना के प्रति आग्रहशील नहीं हैं, किंतु वे बड़ी तटस्थता के साथ अपने भारतीयपन को उजागर कर देती हैं। उनमें एक बोल्डनैस है, फैंटेसी का सौंदर्य है, जीवन-यथार्थ की मार्मिकता है और सच यह भी है कि उनके कहानीकार में अनछुए प्रसंगों तथा अलिखित जीवन-छवियों के चित्रण की और उन्हें प्रेषणीय भाषा में अभिव्यक्त करने की क्षमता है। हिंदी की मुख्यधारा में भी उनके उचित स्थान को अब कोई चुनौती नहीं दे सकता।

दिव्या माथुर की कहानियों में संवेदना और शिल्प

दिव्या माथुर वर्षों से साहित्यिक रचना में संलग्न हैं। उनकी रचनात्मक प्रतिभा के विविध आयाम कविता, कहानी और उपन्यास की विधाओं में प्रतिफलित हुए हैं।
द क्राफ्ट ऑफ फिक्शन में पर्सी लबक ने 'कथ्य का अधिकतम प्रयोग' द्वारा संवेदना और शिल्प के संबन्ध का स्पष्टीकरण किया है। लेखक का अपना रचना-शिल्प होता है जो उसे सबसे अलग करने वाला और उसके व्यक्तित्व की छाप से युक्त होता है। शिल्प की सार्थकता उसकी नवीनता में नहीं वरन विषयानुरूपता में निहित है। जिस प्रकार से पतीली में पकाए जाने वाले चावल के कुछ दाने निकाल कर देखने से यह मालूम हो जाता है कि पतीली के सारे चावल पके या नहीं, कुछ उसी तरह से उनकी कुछ चुनी हुई कहानियों की विवेचना करके उनकी रचना प्रतिभा, लेखन की यात्रा और साहित्यिक उपलब्धि पर प्रकाश डाला जएगा।
दिव्या माथुर की कहानियों का रचनाकाल एक बहुत लम्बी अवधि को समेटा हुआ है। इस दौरान संवेदना की विविधता की दृष्टि से उन्होंने लम्बी यात्रा की है। यह यात्रा बौद्धिक और भौतिक दोनों स्तरों पर रही है। एक तरफ़ भारत से आकर इंग्लैंड में अपना घर बनाने के अनुभवों ने उनके अनुभव फलक का विस्तार किया दूसरी ओर भारतीयता के संस्कार की गहरी पकड़ ने उन्हें जीवन मूल्यों की धरती से जोड़े रखा है। उनकी मानसिकता पर स्वाभाविक रूप से दोनों संस्कृतियों की छाप दिखाई देती है पर ये कहानियाँ भारतीय संस्कारों से जुड़ी होकर भी नॉस्टैल्जिया की कहानियाँ नहीं हैं। उनके पात्रों की समस्या अपने को नये परिवेश में स्थापित करने की है न कि पीछे मुड़ कर देखने की। इस दौरान उन्होंने अपने परिवेश के जीवन की विसंगतियों को संवेदनशील दृष्टि से पहचान कर आत्मभोगी की सी अंतरंगता सहित कहानियाँ बुनी हैं। उनकी कहानियों के विषय विशद हैं।

संवेदना और शिल्प के संतुलित प्रयोग से लिखी गई यथार्थवादी कहानी का एक उत्कृष्ट उदाहरण 'बचाव' है। 'भारतीय और पाश्चात्य संस्कृतियों की मानसिकता को दिव्या ने निंदिया के चरित्र में बखूबी से चित्रित किया है। दिव्या की कहानी कहने का अंदाज़ एक निर्लिप्त तटस्थता का है। भारतीय समाज के चित्रण में वे सामाजिक रुढ़ियों का ज्यों का त्यों वर्णन करती हैं। परिवार में बेटी का जन्म एक अभिशाप समझा जाता है और बेटी एक बोझ! दहेज़ प्रथा के बोझ के नीचे ना जाने कितने माता-पिता के अरमान दफ़न हो जाते! 'अभिनय' कहानी आधुनिक पति-पत्नी के सम्बन्ध की संश्लिष्टता को दर्शाती है। सुखी दाम्पत्य जीवन एक ऐसी मृग मरीचिका है, जिसकी खोज में पूरा जीवन बिताने पर भी अंत में निराशा ही हाथ लगती है।
संवेदना की विविधता और कल्पना की अतिशयता पर अधारित कहानियों में '2050' भविष्य की फैंटेसी पर लिखी गई कहानी है, जिसमें दिव्या की सर्जनात्मक प्रतिभा का एक नया आयाम प्रस्तुत है। कहानी का प्लॉट भविष्य के ब्रिटेन के सामाजिक रूप पर केंद्रित है। दिव्या की कल्पना का भावी ब्रिटिश समाज जिसमें गोरों का प्रभुत्व होगा केवल चौंकाने वाला ही नहीं भावी पीढ़ी के अस्तित्व की सुरक्षा के प्रति चिंतित करने वाला है।
संवेदना की विविधता का एक और प्रयोग 'गूगल' कहानी में मानवेतर जीवों की मानसिकता की कल्पना में है। चूहों पर प्रयोग करने वाले वैज्ञानिक कभी यह नहीं सोचते कि उनके भी मन होते हैं। कहानी का अंत अत्यंत मार्मिक होने के साथ ही समाज मे वृद्धजनों के अधिकार, पशु-संरक्षण तथा पशुओं पर किये जाने वाले वैज्ञानिक प्रयोग की

नैतिकता पर गंभीर नैतिक प्रश्न उठाता है। 'कथा सत्यनारायण की' और 'एक था मुर्गा' कहानियों में पारम्परिक कथा और समानांतर कहानी लिखने का सफल प्रयोग देखने को मिलता है। सत्यनारायण की कथा के वाचन से सूत्र पकड़कर सुशीला, रूपा और निधि की कहानी बुनी गई है।
संवेदना की दृष्टि से समृद्ध और शिल्प की दृष्टि से सधी हुई दिव्या की ये कहानियाँ पात्र, परिवेश, पाठक और कहानीकार को एक साथ जोड़ती हैं। साधारण सी लगने वाली घटनाओं द्वारा गंभीर समस्याओं को रेखांकित करने की कुशलता, उनकी विकसनशील सर्जनात्मकता के उत्कृष्ट उदाहरण हैं जो उनको मुख्य-धारा की महत्वपूर्ण कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठित करती हैं। भावना और चिंतन के संयोग से लिखी कहानियों का साहित्य-बोध तथा समसामयिक जीवन की विसंगतियों को रेखांकित करने में सक्षम सांस्कृतिक बोध उनकी कहानियों की सफलता है।

डॉ अरुणा अजितसरिया एम.बी.ई,

केम्ब्रिज इंटरनेशनल के हिंदी विभाग से अंतर्राष्ट्रीय मुख्य परीक्षक, उच्चायोग-लंदन द्वारा जॉन गिलक्रिस्ट हिन्दी शिक्षण सम्मान से पुरस्कृत और समीक्षक।

देसी गर्ल्स

महिलाओं के लिए खुद को खुलकर व्यक्त करना कभी आसान नहीं रहा, लेकिन लेखन एक ऐसा तरीका है जिसके द्वारा वे यह कर सकती हैं। जेन ऑस्टेन के बहुचर्चित उपन्यासों के माध्यम से हम उनके जीवन और समाज को देख सकते हैं। फिर भी, जेन ऑस्टिन के लिए एक पुरुष की दुनिया में सफल होना बेहद कठिन था।वैसे,वीमेन्स-लिब के बाद के पांच दशकों में, मानसिक, भावनात्मक, शारीरिक, सांस्कृतिक रूप से महिलाओं को बंधनमुक्त करने की परियोजना ने काफ़ी प्रगति की है किंतु ऐतिहासिक रूप से,यह कई सहस्राब्दियों से एक आदमी की दुनिया रही है,शक्ति का संतुलन अधिक नहीं बदला है। ऐसे में महिलाओं के लेखन को बढ़ावा देने के लिए दिव्या माथुर के देश विदेश में बसी भारतीय लेखिकाओं के चार कहानी संग्रहों –'औडिस्सी', 'आशा', 'देसी गर्ल्स' और 'इक सफ़र साथ साथ' का प्रकाशन अद्वितीय है।

इन संग्रहों की कहानियां पहचान, प्रवास, विश्वासघात,क्रॉस-सांस्कृतिक विवाह, घरेलू हिंसा, वृद्धावस्था और मृत्यु के मुद्दों से निपटती हैं।कुछ पितृसत्तात्मक समाजों में, यहां तक कि महिलाएं अब भी मानती हैं कि पत्नी को पीटना पति का अधिकार है।कहते हैं कि प्रवासी गोल छेद में चौकोर खूंटे की तरह होते हैं जब तक कि वे अंततः नए देश में बस नहीं जाते और 'उनके जैसे' ही बन नहीं जाते हैं। कहानियों को साझा करना, दूसरों को सही ढंग से सोचने, कार्य करने और विकास के संवाद का हिस्सा बनने के लिए प्रेरित करने का एक अच्छा तरीका है।संघर्ष और अंतिम मुक्ति की वास्तविक जीवन की कहानियां,ईमानदारी से लिखी गई, बहुत प्रेरणादायक होती हैं। जो अपने परीक्षणों के बारे में खुले तौर पर लिखने के लिए पर्याप्त बहादुर हैं, वे उन लोगों को बहुत सशक्त बना सकते हैं जो उनके शब्दों को पढ़ते हैं।

जापानी भिक्षु रयोकान ने लिखा था: जीवन घास के एक ब्लेड पर कांपने वाली ओस की बूंद है तो आइए ओस सूखने से पहले इन संग्रहों में सम्मिलित कहानियों को पढ़ें और उनका आनंद लें।

लेडी मोहिनी कैंट नून

लेखक, पत्रकार, नाटककार, फिल्म निर्माता और चैरिटी 'लिली' की संस्थापक

झूठ झूठ और झूठ-झूठ के माध्यम से सच की तलाश

तेजेन्द्र शर्मा

लेखक, कथा-यूके के संस्थापक और पुरवाई के संपादक

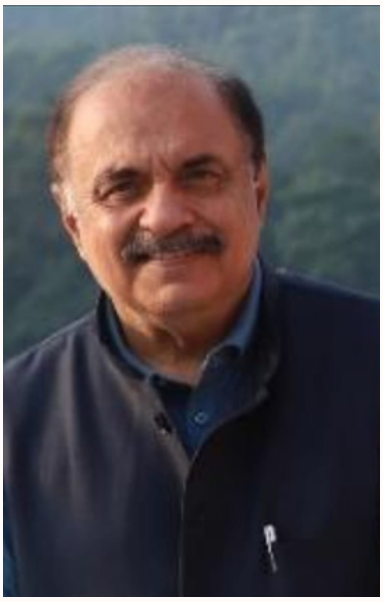

ऐसा बहुत कम देखने को मिलता है कि कोई कवि या कवयित्री एक ही विषय को लेकर एक पूरा संग्रह ही रच डाले। दिव्या माथुर इस माने में एक अपवाद मानी जा सकती हैं, जिन्होंने 'ख़याल तेरा', 'रेत का लिखा', '11 सितम्बर - सपनों की राख तले' जैसे एक ही विषय पर आधारित संग्रहों के बाद एक नया संग्रह प्रकाशित किया है, 'झूठ, झूठ और झूठ'।

कविता की वक्रता को बरक़रार रखते हुए वे सरल शब्दों में अपनी बात अपने पाठक तक पहुँचा देती हैं। दिव्या थिसॉरस लेकर झूठ के भिन्न-भिन्न अर्थ बताने का काम नहीं करती हैं बल्कि झूठ के वजूद को ख़ुद महसूस करती हैं और अपने पाठकों के साथ बाँटती हैं । झूठ केवल एक भाव मात्र नहीं है; दिव्या कविताओं में झूठ एक हाड़-मांस के ठोस चरित्र के रूप में उभर कर आता है जिसे न केवल महसूस किया जा सकता है, बल्कि साक्षात देखा जा सकता है: "कौओं की/काँव काँव के बीच/मैना का/एक सुरीला स्वर यूँ उगा/जैसे कीचड़ में खिला कमल/जैसे झूठ के ग़र्त में सच की ज्योति / या सीप से निकला मोती!"

दिव्या जीवन के हर पहलू, हर क्षेत्र में झूठ को देखती हैं, पहचानती हैं और अपने पाठक के साथ बाँटती हैं। वह जानती हैं कि सबसे कठिन है पहला झूठ बोलना। एक बार झूठ बोल दिया तो फिर कहीं कोई झिझक बाक़ी नहीं रह जाती: "जली हुई रुई की बत्ती/बड़ी आसानी से जल जाती है/नई बत्ती जलने में बड़ी देर लगाती है। आसान हो जाता है रफ़्ता रफ़्ता/है बस पहला झूठ ही मुश्किल से निकलता।" दिव्या इस सच से भी वाक़िफ़ हैं कि हम सब उस समय हमारे जीवन का सबसे बड़ा झूठ बोलते हैं जब हम कहते हैं कि हम झूठ नहीं बोलते: "अपने झूठ का ढिंढोरा/हम ख़ुद ही पीटते हैं / ये सोचकर कि हमसे सच्चा कोई नहीं/डंके की चोट पर झूठ बोलते हैं।" और झूठ का वर्चस्व: "शैतान का पिता है झूठ / लम्बा चौड़ा और मज़बूत / सच है गांधी जैसा कृशकाय / बदन पे धोती लटकाए।" और "झूठ है दामाद सा / जिसकी ख़्वाहिशें कभी पूरी नहीं होतीं।"

दिव्या के इस संग्रह की कविताएँ छोटी-छोटी कविताएँ हैं जो बड़ी बात कहती हैं। ये कुछ ख़्याल हैं झूठ के बारे में जिनके माध्यम से दिव्या हमें सच के दर्शन करवाती हैं। कहा जा सकता है कि यह कविता संग्रह झूठ, झूठ और झूठ के माध्यम से सच की तलाश यात्रा है, जिसमें दिव्या पूर्ण रूप से सफल हैं। हिन्दी कविता क्षेत्र में इस कविता संग्रह का खुले दिल से स्वागत है।

कर्मयोगिनी दिव्या माथुर

शैलजा सक्सेना

(हिन्दी राइटर्स गिल्ड-कनाडा की सह-संस्थापिका/ निदेशिका हैं और अभिनय में भी सक्रिय हैं। संपादन, प्रकाशन में संलग्न, वे बहु पुरस्कृत लेखिका हैं।)

कार्यक्रम का आयोजन हो या हिन्दी का प्रचार-प्रसार अथवा लेखन, दिव्या माथुर की सजग आँखों और कर्तव्यपरायण मन से कुछ नहीं छूटता। कई बार तो मुझे लगता है कि दिव्या जी के एक दिन में कई-कई दिन समाए रहते हैं अन्यथा कैसे वे नेहरू सेंटर के प्रति माह के दस-बारह कार्यक्रमों के आयोजनों के बीच भी अपने लेखन की पतवार थामे आगे बढ़ती गईं और अब सेवानिवृत होने पर प्रतिष्ठित साप्ताहिक संगोष्ठियों के बीच भी निरंतर लेखन और प्रकाशन का काम करती हुई समकालीन लेखकों के लिए प्रकाश-स्तम्भ बनी हुई हैं? उनके अनगिनत मित्र उनकी मीठी मुस्कान और उनके निरंतर काम करते रहने की प्रवृति के प्रशंसक हैं।दिन रात घड़ी की सुइयों से आगे उनका मस्तिष्क और हाथ भागते हैं, चेहरे की मीठी मुस्कान पर वे थकान को हावी नहीं होने देतीं।

पिछले ढाई वर्ष में लगभग हर शनिवार और रविवार,वातायन और वैश्विक हिन्दी परिवार के कार्यक्रमों में उनके साथ ही बीते हैं। उनकी उत्सुक और सजग दृष्टि, ज़ूम पर जुड़ने वाले हर व्यक्ति का स्वागत करती हुई कार्यक्रम के विषय की तहों और जड़ों को टटोलने लगती है। चैट पर चल रहे संवादों से संवाद करती हुई वे वक्तव्यों पर अपनी राय भी लिखती चलती हैं और अंत में उनके चेहरे पर संतुष्टि की मुस्कान और आँखों में सफ़लता की चमक श्रोताओं और दर्शकों के मन भी हरे-भरे कर देती है।

ऐसा नहीं कि उनका अपना व्यक्तिगत जीवन नहीं किंतु समय का मूल्य जैसे उनके भीतर बिंध गया हो। हर दिन को एक उपहार की तरह पूरा-पूरा जीना और अनेक काम कर लेना, हर दुख और परेशानी को धाकड़ अंदाज़ में धता बता देना उनकी सहज प्रकृति है पर इसके चलते अपने विचारों को दृढ़ता से रखने में भी वे कोई कोताही नहीं करतीं। आत्मीयता और दृढ़ता का यह अनोखा संगम उनके व्यक्तित्व की ईमानदारी को दिखाता है।

दिव्या जी के साथ 'दो देश-दो कहानियाँ' की श्रृंखला का आयोजन करते हुए मैंने उनके इस व्यवस्थित तरीके को बहुत पास से देखा। कई सप्ताह पहले ही कार्यक्रम को अंतिम रूप देकर वे उसके प्रसार कार्य में लग जाती हैं; हिंदी को उनसे अच्छा प्रवासी जन सम्पर्क अधिकारी नहीं मिल सकता। सभी को साथ लेकर चलती, लिखने और प्रकाशित होने के लिए प्रोत्साहित करती, वे वैश्विक स्तर पर रचनात्मकता की एक जुलूस के समान दिखाई देती हैं। अभिव्यक्ति उनकी श्वास है,अत:निरंतर विचार और भाव का मंथन चलता है और वे निरंतर लिखती हैं। प्राय: कहा जाता है कि 'जीवन कहानी से भी अधिक विचित्र होता है'। दिव्या जी जीवन की इन विचित्र स्थितियों को पूरी निर्भीकता से लिखती हैं और कहानी को फ़िल्म की तरह आँखों के सामने जीवंत खड़ा कर देती हैं। विदेशी संस्कृति के कितने ही कुंठित, काले पक्ष और प्रवासी भारतीयों के स्वार्थी स्वभाव को वो खुल कर दिखाती हैं; उनकी कहानियाँ जैसे 'मेड इन इंडिया', 'बचाव' आदि लेखकीय स्पष्टता और निर्भीकता का ज्वलंत उदाहरण हैं। वे बताती हैं कि भारत जाकर प्रवासी अपनी शान बघारते हैं: "काक्के, औत्थे दी साफ़-सुथरी हवा, वदिया खाना-पीना, लाइफ़ विच कोई वरी-शरी नहीं" (मेड इन इंडिया) पर इस कहानी में वे विदेश में बसे जसबीर लांबा के परिवार की असलियत दिखाती हैं; जो इतनी कुरूप है कि जुगुप्सा के कारण रौंगटे खड़े हो जाते हैं। 'बचाव' कहानी में निंदिया के माध्यम से विदेश के जीवन में पैसों की कमी और नौकरी में होने वाले यौन शोषण आदि के बारे में खुल कर लिखा गया है, यह स्पष्टता दिव्या जी को अन्य प्रवासी लेखकों से बिल्कुल अलग स्तर पर ले जाकर खड़ा कर देती है; सच को शुगर-कोट करने की न उनकी इच्छा है न आदत! उनकी अनेक कहानियाँ विदेशी जीवन की दुर्गंध भरी गलियों का गूगल मैप है। कहानियों में तो वे पात्रों के अनुरूप अंग्रेज़ी, पंजाबी, गुजराती का धारा-प्रवाह उपयोग करते हुए दृश्य को फिल्म की तरह उपस्थित करती हैं। हिंदी साहित्य प्रवासी कहानियों से जिस विदेशी जीवन के यथार्थ की अपेक्षा रखता है, उस यथार्थ को भरपूर दिखा कर दिव्या जी अपने कहानीकार होने के कर्तव्य को पूरी तरह निबाह रहीं हैं।

ऐसे ही कविताओं में 'ग्राउंड ज़ीरो' जैसे समसामायिक ज्वलंत विषयों से लेकर वे स्त्रियों की स्थिति, संबंधों की टूटन, मध्यवर्गीय इच्छाओं आदि अनेक विषयों पर सहजता से लिखती हैं। अपनी कविता 'चंदन-पानी' में वे लिखती हैं: चंदन पानी न हो पाए / सरकारी चक्की में पिसे/अफ़सर बनने की चाह लिए
बच्चों का अपने पेट काट / घूस में लाखों रुपये दिए / आँखों से अपनी अलग गिरे/ चंदन पानी न हो पाए।" 'दर्द का रिश्ता' के ये सरल शब्द देखिए: जब तक मुझ से निभा, निबाहा / दर्द का रिश्ता/ टूटे हाथ सा / सदा साथ रहता है लटका / दर्द, दर्द और दर्द करता है।"

दिव्या जी की भाषा की विशेषता है कि उसमें कठोर सत्य की पैनी धार, सरल शब्दों में है; वे कम शब्दों में भी मारक चित्र उपस्थित करने में सक्षम हैं। यह सटीकता, कई बार सटाक से दिल पर प्रहार करती है। कह सकते हैं कि दिव्या जी ईमानदारी से अपने परिवेश का सत्य, स्पष्ट भाषा में लिख रही हैं। वे भाषा और साहित्य के लिए जितना कर सकती हैं, उससे कहीं आगे बढ़ कर काम कर रहीं हैं। उनका बहुआयामी व्यक्तित्व कर्मयोगिनी का व्यक्तित्व है जो साहित्य और संस्कृति को बचाए रखने और आगे बढ़ाने का संकल्प लिए हैवे अपने कामों को इसी ऊर्जा से करती हुई, हम सबको प्रेरित करती रहें, यही कामना है।

आस्था देव
कवियत्री, लेखिका, प्रस्तोता
और आईटी प्रोफेशनल

विरोधाभास की विलक्षणता: दिव्या माथुर

जब पहली बार वातायन से जुड़ने वाली थी तो दिव्या जी से बात हुई, शब्दों में खरापन और स्नेह दोनों एक साथ थे, और ऐसा बहुत कम होता है।वैसे दिव्या जी के कई गुण हैं जो परस्पर विरोधाभास लिए प्रतीत होते हैं पर बहुत ही सरलता से उनमें समाहित हैं,चाहे वो बच्चों सरीखा उत्साह हो या बड़ों सरीखी कर्मठता, हर काम को शुरू करने के पहले वाली घबराहट हो या उसको सर्वोत्कृष्ट करने की दृढ़ता, नियमों के प्रति उनका अनुशासन हो या नया सिखाने में उनकी उदारता! दिव्या जी ऐसी ही हैं, तभी तो विविध पृष्टभूमि से आए, हर उम्र, क्षेत्र या विचारधारा वाले लोगों से वो जुड़ पाती हैं।

यूं तो दिव्या जी, और वातायन के साथ मेरा जुड़ाव बहुत लंबा नहीं है पर गहरा ज़रूर है इसमें एक दूसरे को खुश करने वाला दिखावटी सतही आडंबर नहीं है, दिव्या जी बड़ी बेबाकी से मेरी गलतियां बताती भी हैं और उसे बेहतर करने के रास्ते भी सुझाती है। उनकी पारखी नज़र साहित्य तक ही सीमित नहीं, उसमें कला और संगीत की भी गहरी समझ है! यही नहीं, जीवन के बारे में भी हर गूढ़ बात को वो इतना सरल कर के समझाती हैं कि फिर हर मुश्किल आसान लगती है!

दिव्या जी को अपनी प्रशंसा पसंद नहीं अपितु उन्हें अच्छा काम अधिक आनंदित करता है, इसलिए अपनी फेहरिस्त को यहीं समेटूंगी। प्रार्थना करूंगी कि दिव्या जी को ईश्वर लंबी आयु और अच्छा स्वास्थ्य दें और वे ऐसे ही हम सबमें अपने ज्ञान और अनुभव के मोती बांटते रहें!

ज़हरमोहरा: उर्दू में अनुवादित दिव्या माथुर का कहानी संग्रह

दिव्या माथुर से पहला तआरुफ़ गुज़िश्ता मई, 2015 में डॉ ज़ियाउद्दीन शकेब के माध्यम से हुआ। किसी हिन्दी कहानीकार को पढ़ने का यह पहल मौक़ा था; मुझे ये फ़ैसला करने में वक़्त नहीं लगा कि ये कहानियाँ उर्दू दुनिया तक भी पहुँचनी चाहिएँ। मुझे दिव्या जी की चंद कहानियों से ही ये अंदाज़ा हो गया कि वो ऐसी दुनिया की सैर कराती हैं जिसके माहौल,तर्ज़-ए-ज़िंदगी, तर्ज़-ए-फ़िक्र और नफ़सियात से हमारी शनासाई मामूली सी है।यानी उनकी ये कहानियाँ यूरोप में रहने वाले हिंदुस्तानियों की कसीर-पहलू ज़िंदगी के गहरे अवलोकन पर आधारित हैं। उनमें समाजी हक़ीक़त पसंदी की वही रिवायत मिलती है जिसकी बुनियाद प्रेमचंद ने रखी है। बेशतर कहानियों में औरत और उसके सामाजिक,आर्थिक और जज़बाती मसले इनके मर्कज़ में हैं। इसके बावजूद ये नहीं कहा जा सकता कि उन पर फेमिनिस्ट नुक़्ता-ए-नज़र हावी है या वो किसी आईडीयालोजी का नारा हैं,बल्कि हर किरदार की रचना वो ऐसी मुंसिफ़-मिज़ाजी,रवादारी और हमदर्दी के साथ करती हैं जिससे अंदाज़ा होता है कि वह इन्सानी रिश्तों की गहरी समझ रखती हैं। उनकी कहानियाँ विदेशों में बसे हिंदुस्तानियों के रहन-सहन,रिश्तों, समस्याओं और पेचीदगीयों की ऐसी कहानियाँ हैं जो ज़िंदगी ही की तरह भरपूर और रंगा-रंग हैं;उनमें मशरिक़ी परंपरा,आदर्श,आचार और संस्कार भी हैं और उनमें आने वाली तबदीलीयों की झलक भी। उनमें पूर्वी और पश्चिमी समाजी मूल्यों का संगम भी है और उनके टकराव से जन्मे हालात की माहिराना अक्कासी भी। उनमें ख़ुद कफ़ील व ख़ुद-मुख़्तार औरतों की कामयाबियों की गाथा भी है और दूसरों पर आश्रित औरतों की बेबसी और हक़ीक़ी हालात की दास्तानें भी। मुख़्तसर ये कि इन्सानी रिश्तों की ये ऐसी कहानियाँ हैं जिनमें किरदारों की नफ़सियाती, जज़बाती और समाजी ज़िंदगी के किसी पहलू को नज़रअंदाज नहीं किया गया है,और मेरे ख़्याल में इसकी बुनियादी वजह दिव्याजी का गहरा समाजी शऊर और तेज़ क़ुव्वत-ए-मुशाहिदा है। ज़बान में तख़लीक़ी तजुर्बे करने से उनको ख़ासा लगाव है। कई भाषाओं के अलफ़ाज़ और जुमले वह पात्रों की भाषा-गत शनाख़्त और पस-मंज़र को नुमायां करने और उनको हक़ीक़त का रंग देने के लिए बख़ूबी करती हैं। दिव्या माथुर सलीस, रवां-दवां और नर्म ज़बान में कहानी सुनाने का आर्ट जानती हैं, जैसे ये इन्होंने अपनी नानी-दादी से विरासत में पाया हो।

डॉ अर्जुमंद आरा,
उर्दू विभाग,
दिल्ली यूनीवर्सिटी

ज़िंदगी के रहस्य समेटे है “तिलिस्म”

साहित्यकार की सफलता इस बात में होती है कि वह अपने प्लॉट का चयन कितने विवेकपूर्ण ढंग से करता है, अपने कथा परिवेश का कितना सजीव वर्णन करता है, अपने पात्रों को कितना जीवंत बनाता है, और अपने उद्देश्य को अभिव्यक्त करने में कितना प्रभावी होता है। अगर हम इन कसौटियों पर दिव्या माथुर के प्रकाशनाधीन उपन्यास “तिलिस्म” की बात करें, तो हमें ये सारे विशेषताएँ उसमें दिखाई देती हैं।

“तिलिस्म” का कथानक भारत की राजधानी दिल्ली के एक पिछड़े हुए इलाके, शाहदरा से प्रारंभ होता है, जिसमें एक दरिद्र परिवार का बच्चा अपने जीवन से संघर्ष करता हुआ संयोग से, धनी परिवार द्वारा गोद ले लिया जाता है, और फिर परिवार के एक परिचित उसे अपना दामाद बनाकर लंदन ले जाते हैं। इस तरह यह कई परिवेशों और देशों में फैली हुई कथा है।

दिव्या माथुर का यह उपन्यास मुख्य रूप से एक स्त्री के नज़र से पुरुषों के मनोविज्ञान को चित्रित करता है। अपनी इस यात्रा के दौरान नायक, उपेन्द्र कितनी तरह की समस्याओं से गुजरता है, कितनी तरह के अनुभव प्राप्त करता है, जीवन के उतार-चढ़ाव देखता है, कितनी तरह से सेक्स की दृष्टि से आकर्षित होता है, इसमें ठगा जाता है, और रिक्त रहता है। ये सब बातें इस उपन्यास में पुरुष की मनोविज्ञान को बहुत बारीकी से समझते हुए लेखिका ने प्रस्तुत किए हैं, और वे अपना अमिट प्रभाव छोड़ती है।

इस वृहद आकार के उपन्यास में उपेन्द्र एक ही जीवन में न जाने कितने है जीवन जी लेता है, और उसके माध्यम से जीवन के रहस्य खोलता चला जाता है। जिस तरह से लेखिका ने विभिन्न स्थितियों का वर्णन किया है, जिसमें शाहदरा की गंदी गलियाँ, गरीब परिवार का संघर्ष, पुरुष की शारीरिक भूख, इसके बाद समृद्ध परिवार कि विलासिता, विदेशों की चकाचौंध, अपने ही लोगों द्वारा किए जाने वाले षड्यंत्र और शोषण, घनिष्ठ संबंधों में अविश्वास, अज्ञात दिशा से आने वाले सहायता, इन सबका वर्णन उपन्यास में बहुत प्रामाणिकता और प्रभावात्मकता के साथ किया गया है।

प्रो. राजेश कुमार,

सदस्य, केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल, शिक्षा विभाग, भारत सरकार,
लेखक, भाषाविद और संपादक।

लेखिका की भाषा बहुत समृद्ध और अभिव्यक्ति बहुत सशक्त है। लेखिका ने सायास उसी परिवेश की भाषा पात्रों के संवाद प्रस्तुत किए हैं, जिसमें वे रहते है। पिछड़े हुए इलाके की बोली, पंजाबी भाषा, समृद्ध लोगों की परिष्कृत भाषा, अंग्रेज़ी, उर्दू आदि के रूप इसमें दिखाई देते हैं, जो इस उपन्यास की विषयवस्तु और अर्थ को और अधिक विश्वसनीयता प्रदान करते हैं।

“तिलिस्म” महाकाव्य काव्यात्मक उपन्यास है, जिसमें एक पुरुष विभिन्न संबंधों, और विशेष रूप से विभिन्न स्त्री संबंधों के बीच से अपना जीवन बिताता है, और अंततः वह वापस अपने अम्मी के पास पहुँच जाता है, जो उसके जीवन का आधार बनी रहती है।

दिव्या जी ने उपन्यास के अध्यायों को शीर्षक देकर उन्हें कहानी जैसा रोचक बन दिया है, जो कथा के अर्थ को समझने में मदद भी करते हैं, जैसे - महापाप, ‘बचाओ, बचाओ’, जीवन का सबसे सुन्दर दिन, क्या कहूँ, किस से कहूँ?, मुहल्ले के सारे मुसल्ले हमारे रिश्तेदार, आदि।

दिव्या जी की रचना प्रक्रिया की विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि वे अपनी रचनाओं पर बहुत श्रम करती हैं, और उसके अनेक-अनेक संशोधन करती हैं, जब तक कि वे संतुष्ट नहीं हो जातीं, जो मुश्किल से ही होता है। वे अपने करीबी लोगों से अपनी रचनाओं पर चर्चा भी करती हैं, और उनके सुझावों पर विचार भी करती हैं। उदाहरण के लिए, मैंने देखा है कि उन्होंने “तिलिस्म” उपन्यास पर काम करते हुए, उसके अंत को इतना बदल दिया कि पूरे उपन्यास का अर्थ ही अलग हो गया। उपन्यास कला, भाषा और अभिव्यक्ति, पात्र और चरित्र चित्रण, देश काल वातावरण, और उद्देश्य आदि सभी के निष्कर्ष पर यह “तिलिस्म” सफल और पठनीय उपन्यास साबित होता है।

यथा नाम तथा गुण

डॉ बीना शर्मा,

निदेशक, केंद्रीय हिंदी संस्थान-आगरा,
अध्यक्ष, अंतरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण विभाग
एवं 'शैक्षिक उन्मेष' ई-पत्रिका की संयोजक,
दैनिक स्तम्भ 'सफ़र जारी है' (8 खंड) की
लोकप्रिय लेखिका।

दिव्या जी से मेरा परिचय भले ही ऑनलाइन मोड का हो पर वे बहुत आत्मीय हैं। उनके अनेक अनेक रूप हैं, वे एक साथ एकोअहम बहुस्याम हैं। कवि, रचनाकार, संपादक, आयोजक, अनेक पुरस्कारों से सम्मानित, कम शब्दों मे गहरी और गंभीर बात कह जाने वाली, हीरे की माफ़िक हैं, रहिमन हीरा कब कहे लाख टका मेरो मोल। उनका नाम ही दिव्या नहीं, वे सचमुच में दिव्य गुणों से ओतप्रोत हैं। मुझे कभी कभी बहुत हैरानी होती है कि एक व्यक्ति इतना इतना काम इतनी सुघड़ तरीके से कैसे कर पाता है। उनका भारत आगमन हुआ पर अपनी व्यस्तता के चलते मैं ही उनसे मिलने नहीं जा सकी। बाद में बड़ा पछतावा हुआ कि एक प्रेरक व्यक्तित्व से मिल लेती तो कितना अच्छा होता। अब पछताए होत क्या जब समय निकल गया।

किसी भी व्यक्ति के अनेक अनेक रूपों में मुझे उसका एक अच्छा इंसान होना सबसे अधिक भाता है, बस जो मानवीयता प्रखर हो तो बाकी सब सध जाता है। और मुझे यह कहते बहुत हर्ष है कि मेरी प्रिय सखी दिव्या सबसे पहले मनुष्य है बाकी सब बाद में। संस्थान से मोटूरी सत्यनारायण पुरस्कार प्राप्त हैं, अभी उनका रचनाकर्म संस्थान से प्रकाशित हुआ ही है।

वातायन संगोष्ठि साप्ताहिक करती ही हैं; लंदन में रहते भी अपनी जड़ों से जुड़ी हैं। लगातार लिखती पढ़ती रहती हैं, सक्रिय हैं। सच कहूं तो वे स्त्री जाति के लिए प्रेरणा पुंज ही हैं। वैश्विक परिवार के सभी सदस्य आपस में वसुधैव कुटुंबकम् की भावना से जुड़े हैं और सबको जोड़ने के सेतु बने हैं प्रखर मेधा संपन्न श्री अनिल जी। वैश्विक हिंदी परिवार के बहुत से सद्स्यों के साथ आत्मीयता के सूत्रधार वे ही है।

साहित्य जगत को अपने रचना कर्म से पोषित करने वाली दिव्या जी को बहुत बहुत बधाई।

दिव्या जी को जितना मैंने जाना

डॉ. संध्या सिंह
हिंदी व तमिल भाषा अध्यक्ष
सेंटर फ़ॉर लैंग्विज स्टडीज़
नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ़ सिंगापुर
सिंगापुर

मिलना मिलाना कहते हैं ईश्वर के हाथों का खेल है और जीवन के किस मोड़ पर किसी ऐसी शख्सियत से भेंट करवा दें कि लगे जैसे आपको तो बहुत पहले से जानते हैं| प्रवासी हिंदी साहित्य लेखन की प्रतिनिधि साहित्यकार जिनका रचना संसार बहुआयामी है, सुश्री दिव्या माथुर जी से पहली बार मिलना मेरे लिए किसी अपने से लम्बे समय के बाद मिलने जैसा ही रहा| रचनाएँ अपने लेखक को अपने पाठक के इतना नज़दीक ला देती हैं कि लगता है, यह तो मेरे अपने ही हैं| प्रवासी साहित्य और लेखन में एक ऐसा नाम जिसके बिना उसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती, ऐसी दिव्या जी से उनके साहित्य के अलावा ईमेल, फेसबुक आदि के माध्यम से परिचय पहले से रहा लेकिन आमने-सामने वाली पहली मुलाकात भोपाल में "विश्व रंग" के दौरान हुई। भले ही वह पहली मुलाकात प्रत्यक्ष रूप से रही हो पर कभी लगा ही नहीं कि मैं उन से पहले नहीं मिली। मैंने उनकी एक छवि अपने मन में गढ़ी थी और जब पहली बार सामने मिलीं तो जैसा सोचा था उससे और आगे ख़ास व्यक्तित्व के रूप में दिव्या जी से परिचय हुआ। महसूस हुआ कि शायद जिसका कद जितना बड़ा होता है, नम्रता भी उसी अनुपात में बढ़ती जाती है| वर्तमान में स्वप्रचार वाली पीढ़ी चारों ओर छाई हुई है और ऐसे दौर में जब हम दिव्या जी जैसे लोगों से मिलते हैं तो लगता है समाज को बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है|हिंदी साहित्य को इतना कुछ समर्पित करने वाली दिव्या जी हमेशा स्वयं को पीछे ही रखती हैं|यह गुण बहुत ख़ास और वर्तमान में न के बराबर लोगों में दिखाई देता है|विश्व रंग महोत्सव के दौरान उनके साथ प्रवासी कथा लेखन विषय पर संगोष्ठी चर्चा में मंच साझा करने का अवसर मिला और उनकी आत्मीयता और साथ पाने का सिलसिला भी|

उन्होंने अपने वातायन मंच के समूह से मुझे जोड़ा और धीरे-धीरे उनकी अन्य गतिविधियों के बारे में भी मैं अधिक रू ब रू होने लगी। सिंगापुर से लंदन की गोष्ठियों, गतिविधियों की सूचना के साथ ही दिव्या जी के व्यक्तित्व के अलग-अलग पहलुओं पर नज़रें टिकने लगीं| संदेशों के माध्यम से अब तो बातचीत का सिलसिला शुरू हो गया था और बड़ी जल्दी ही दूसरी बार दिल्ली के हिंदी सम्मेलन में हम दोनों पुनः मिले, साथ ही इस बार इन्द्रप्रस्थ कॉलेज के अतिथिगृह में हम दोनों साथ रुके थे। उनके साथ चाय पीना और चाय पर चर्चा करना मुझे खूब भाया| भारतीय संस्कृति, राजनीति कई ऐसे विषय हैं जिन पर हम एक मत ही रहते हैं और यह मुझे उनके और करीब ले जाता है| मैं हमेशा सोचती थी कि दिव्या जी इतना सब कैसे कर लेती हैं। नियमबद्धता मुझे लगता है कि दिव्या जी की रग-रग में समायी हुई है और इसी कारण इतना कुछ उन्होंने लिखा है, जिया है, ब्रिटेन में हिंदी साहित्य को एक अलग मुक़ाम तक पहुँचाया है। दिल्ली सम्मलेन से लौटने के बाद महीना डेढ़- महीना भी नहीं बीता होगा कि कोविड का प्रकोप शुरू हो गया। ऐसा लगा जैसे अब दुनिया बिल्कुल थम जाएगी| जो जहाँ है वो वहीं सिमटकर रह जाएगा। मिलना-जुलना तो दूर की बात है, हम एक-दूसरे की शक्ल भी नहीं देख पाएँगे। कहते हैं आवश्यकता आविष्कार की जननी है और कोविड काल की सबसे बड़ी उपलब्धि अगर साहित्य जगत में देखी जाए तो ज़ूम के माध्यम से गोष्ठियों का आयोजन है। कब किसी ने सोचा था कि इतनी आसानी से पूरी दुनिया वैश्विक मंच बन भिन्न विषयों पर चर्चा करेगी| दिव्या जी ने वातायन मंच की ओर से ऑनलाइन मिलन का जो दौर शुरू किया वह लगातार अभी तक बरकरार है। और इस साप्ताहिक संगोष्ठी की संकल्पना ने दुनिया के भिन्न कोनों में बसे हुए हम प्रवासियों को इस प्रकार एक-दूसरे के सामने ला दिया, एक-,दूसरे से जोड़ दिया कि आज कई ऐसे लोग हैं जिनसे प्रत्यक्ष रूप से मुझे मिलने का अवसर नहीं मिला है लेकिन जब कभी बात होती है तो लगता है मैं तो उनको बरसों से जानती हूँ और इसका पूरा श्रेय मैं वातायन मंच, वैश्विक हिंदी परिवार आदि को देना चाहूँगी।

दिव्या जी का व्यक्तित्व ऐसा है कि वे सभी को जोड़ते हुए लेकर आगे बढ़ना चाहती हैं और इसी क्रम में उन्होंने सिंगापुर संगम हिंदी पत्रिका और संगम सिंगापुर हिंदी संस्था को वातायन संगोष्ठी के लोकगीत/गीत शृंखला में साथ लेकर चलना प्रारंभ किया। संकल्पना से लेकर संयोजन तक ज़्यादातर कार्य स्वयं उनके माध्यम से ही होता है पर कभी इस बात को हावी नहीं होने दिया कि वे ही सब कुछ करती हैं बल्कि उन्होंने जिस संस्था को भी साथ जोड़ा है, उसे उतना ही महत्त्व देती हैं। लोक गीत वह विधा है जो पसंद तो सबको आती है पर पीछे लौटकर देखना, ढूँढना, उस पर कार्य करना जिस प्रकार के समय की माँग करता है वह हर कोई नहीं कर पाता है। भारत की कई बोलियों पर केंद्रित संगीतमय कार्यक्रम चाहे भोजपुरी हो, अवधी हो या अन्य बोलियाँ या भाषाएँ हों सभी कार्यक्रम और विषय में विविधता, गायकों में भी विविधता उनके केंद्र में रहे हैं। जिसकी रचनाओं को वैश्विक संवेदनाओं की संवाहक कहा जाए वह भला ऑनलाइन संगोष्ठियों में विविधता, नियमितता, स्तरीय कार्यक्रमों की शृंखला को कैसे अनदेखा कर सकती हैं| उनके स्वभाव में बालकों सी उत्सुकता उनके हर कार्यक्रम को इतना बेहतर कर देती है| दिव्या जी के माध्यम से वातायान के मंच से पिछले ढ़ाई तीन वर्षों से लगातार चल रही गोष्ठियों में जैसा पहले भी कहा गया है सबसे बड़ी बात विविधता, कार्यक्रम का स्तर ऊँचा होना और नियमितता है| उनके आदर्श या पूर्णतावादी दृष्टिकोण के कारण विदेशों में सबसे प्रतिष्ठित मंच के रूप में वातायान की ख्याति है| कई बार स्वयं को उस संगोष्ठी का हिस्सा महसूस करते हुए भी सम्मान महसूस होता है।

प्रत्यक्ष मुलाकात से बहुत पहले दिव्या जी का सान्निध्य सिंगापुर संगम को मिला और सिंगापुर संगम पत्रिका के लिए उन्होंने अपनी कहानियाँ सहर्ष भेजीं और यह उस समय की बात है जब पत्रिका अपने नए रूप में थी। अगर वे चाहतीं तो कह सकती थीं कि उनकी रचनाएँ इस युवा पत्रिका को संभवत कुछ वर्षों बाद देना चाहेंगी लेकिन किसी भी प्रकार का दर्प दिव्या जी में नहीं है और यही उन्हें अन्य लोगों से अलग करता है।

दिव्या जी का साहित्य बहुकोणीय है| उनकी कई कहानियाँ प्रवासी जीवन की विडंबनाओं को दिखाती कई बार विदेश के प्रति मोह भंग भी उपस्थित करती हैं| रचनाओं के किरदारों के नाम कहीं भले अंग्रेज़ी मूल के हों जैसे एडम और ईव पर कथानक अपने क्रम में उन्हें हमारे आस-पास के समाज का ही महसूस करवाता है|स्त्री-पुरुष के संबंधों में द्वंद्व और उस उपजे द्वंद्व के परिणाम को भी उन्होंने खूब निखारा है|उनकी कहानियाँ, कविताएँ, उपन्यास प्रवासी साहित्य का स्तम्भ हैं|दिव्या जी बहु-पुरस्कृत लेखिका हैं, साहित्यकार, अनुवादक और सम्पादक के रूप में आठ कहानी-संग्रह, आठ कविता-संग्रह, एक उपन्यास, शाम भर बातें और छह सम्पादित संग्रह उनके प्रकाशित हैं। उनकी कई रचनाएँ भारतीय विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम का हिस्सा हैं, उन पर शोध कार्य किये जा रहे हैं और किसी भी रचनाकार के लिए ऐसी उपलब्धियां सबसे ख़ास होती हैं| हमारे दिल्ली प्रवास के समय भी मैंने देखा था कि कई विद्यार्थी उनसे अपने शोध के सिलसिले में बात करने को बेचैन थे|उनका साहित्य पढ़ते हुए भारत और विदेश को प्रवासी नज़रिए से समझने व सीखने का मौक़ा मिलता है| समाज को भीतर तक परत दर परत उघड़ने का अवसर उपस्थित होता है|

दिव्या जी से मिलना, उनको जानना मेरे लिए उन ख़ास घटनाओं में से है जिन पर बार-बार पीछे मुड़कर देखने की, हर्षित होने की इच्छा होती है|दिव्या जी आप इसी तरह सक्रिय रहें और हम सबको जोड़ती रहें|

घर से चलकर पूरी दुनिया तक की यात्रा हैं – दिव्या की कहानियाँ

डॉ मनोज मोक्षेंद्र भारत

चुनिंदा कथाकार ऐसे होते हैं जो शून्य से शुरू तो होते हैं किन्तु वे किस हद तक चले जाएंगे, इस बारे में कयास लगा पाना बहुत मुश्किल होता है। हिंदी साहित्य की पहली और दूसरी पीढ़ियों के कथाकारों और यहाँ तक कि मंझे हुए कथाकारों में भी, स्थैतिकता और ठहराव है जहाँ वे स्वयं को स्वयं द्वारा बुने गए कथानकों के एक निश्चित दायरे तक ही सीमाबद्ध रख पाते हैं और अपने चिंतन में बहुत आगे नहीं बढ़ पाते हैं। समीक्षकों की नई पीढ़ियां रचनाकारों को अपने समय के चश्में से बड़े आकार-प्रकार में देखना चाहती हैं तथा उनके रचना-संसार को ठिंगना न बनाते हुए एक नई दिशा प्रदान करती हैं। बहरहाल, हिंदी साहित्य की अद्यतन पीढ़ी की कथाकार दिव्या माथुर की कहानियों में ऐसी कोई बात नहीं है कि बाल की खाल निकालते हुए उनमें क्षितिज के पार, चतुर्दिक देखने की कोशिश की जाए। अगर यह छोर दिखता है तो उस छोर को भी देखा जा सकता है। हाँ, बड़ी सहजता और सायसता से। बिलाशक, उनकी कहानियों में पात्रों की जटिल मानसिकता तो है; पर, सुस्पष्ट कथानक के ताने-बाने के साथ जो मनोवैज्ञानिक विश्लेषण होता है, वह उनके पात्रों की जटिल मानसकिता को समझने के लिए बहुत आसान बना देता है। उल्लेख्य है कि दिव्या को अपना कथानक बुनते हुए यह भली-भांति पता होता है कि उसका आकार-प्रकार कैसा होगा और एक कथाकार के लिए ऐसा होना आवश्यक भी है; तभी वह अपने विचार-तत्त्व को पुष्ट बना सकेगा और अपने कथ्य के चरम उद्देश्य को सहजता से स्थापित कर पाएगा। इस प्रयोजनार्थ वह कहानी के हर औजार का इस्तेमाल बड़ी सूझबूझ के साथ करती हैं। यदि ऐसा कहा जाए कि दिव्या ने इस संसार के दोनों गोलार्धों को अपने आनुभविक स्तर पर देखते-भोगते हुए अपने कथा-संसार को व्यापक स्वरूप प्रदान किया है तो यह संपूर्ण सच नहीं है क्योंकि नई दुनिया और पुरानी दुनिया से कहीं अधिक व्यापक और अपरिमेय होती है - मनुष्य की मानसिक दुनिया जिसमें दिव्या सतत यात्रा करती हुई नज़र आती हैं। यदि वह ब्रिटेन-प्रवास नहीं करती तो भी उनके सामाजिक वीक्षण-अनुवीक्षण का दायरा व्यापक होता क्योंकि उनके दृष्टिकोण में मानव-जीवन का हर पक्ष, अपने समस्त उपांगों समेत शामिल होता है। उनकी कहानियों में पूर्व-पश्चिम की ज़िन्दगियों की टकराहट की ध्वनियाँ-प्रतिध्वनियां, गूँज-अनुगूँज स्पष्टतया श्रव्य-दृष्टव्य हैं।

दिव्या की कहानियों में केवल 'ओरिएंटल' (oriental) और 'ऑक्सीडेंटल' (occidental) संस्कृतियों और परंपराओं की टकराहट की टंकार ही नहीं सुनाई देती है, अपितु विलिंगियों के बीच की तीक्ष्ण नोकझोंक के दहकते तेवर मर्म-स्थल तक को पिघला जाते हैं। इन विलिंगियो के माध्यम से भी दिव्या पौर्वात्य और पाश्चात्य संस्कृतियों के बीच की टकराहट को बिंबित करती हैं।

लिंग-वर्ग-जाति आधारित दलित चिंतन, वामी विचारधारा और आधी दुनिया को पोषित करने वाला स्त्री-चिंतन ऐसी संकरी गलियां हैं जहाँ से गुजरते हुए दिव्या चुटहिल हो जाती हैं और तब वह झट से इन गलियों का परित्याग करते हुए जीवन के एक अत्यंत चौरस और खुले मार्ग पर आ जाती हैं जहाँ उन्हें सिर्फ मानव का दर्द और कराह तथा मानव-जीवन में अभावों का ठूंठ मंज़र नज़र आता है; कुंठा और संत्रास दिखाई देता है। उन्हें यह बिलकुल नहीं दिखता कि दर्द से कराहते मनुष्य का वर्ग, जाति या लिंग क्या है; व्याधियां भौगोलिक या राजनीतिक सीमाएं नहीं पहचानती। वे सार्वभौमिक होती हैं। सतत मानवीय चिंतन का उनका स्वभाव उनके कथानकों को इतना खाद-पानी देकर उनकी रचनाधर्मिता को उर्वर बनाता है कि उनकी विश्लेषणात्मक क्षमता पाठकों को विस्मित करती जाती है।

दिव्या की भारतीयता से अविलगेय आत्मीयता है; फिर, उनके आचार-विचार का प्रतिनिधित्व करने वाली उनकी पात्र क्यों न हों?दिव्या की कहानियां बहिर्मुखी और बहुमुखी होती हैं।उन्हें विभिन्न कोणों से जांचिए-परखिए, यह स्पष्ट हो जाएगा कि जो संवाद या कथोपकथन पात्रों की ज़बान से फूटे हैं, वे नपे-तुले हैं; जितने पात्र उनकी किसी कहानी में चित्रित हैं,वे आवश्यकतानुसार हैं;जिस क्रिया-व्यापार में पात्रों को डाला गया है, वह उनके समाज के अनुकूल हैं। अस्तु, बहुत-प्राय: पाठक को यह आपत्तिजनक लगता है कि दिव्या अपने विचार-संप्रेषण में इतनी विस्फोटक क्यों हैं और यहाँ तक कि यौन चेष्टाओं के आपत्तिजनक प्रतिरूपों को भी इतने कर्णस्फोटक लहजे में फटकार क्यों लगाती हैं। यह आवश्यक भी है क्योंकि दिव्या का ध्यान कहानी-कला के सभी छह औज़ारों पर केंद्रित होता है; किसी औजार को छोड़ें तो कैसे छोड़ें! एक वीरांगना-कथाकार तो अपने सभी छह सैनिकों के साथ, शब्द-सारथी की सहमति में, संप्रेषण के चौरस मैदान में छककर लड़ना चाहेगा। सो, दिव्या लड़ती हैं, लड़ती ही जाती हैं।

डॉ मनोज मोक्षेन्द्र, भारतीय संसद में संयुक्त निदेशक, 'वी विटनेस' पत्रिका और न्यूज़ पोर्टल के सलाहकार और संपादक, की डेढ़ दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हैं; प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशित होते रहते हैं।

दिव्या माथुरः मेमेन्तो मोरी

ब्रिटेन में रहने वाली प्रवासी भारतीय हिन्दी लेखक सुश्री दिव्या माथुर से हमारी पहली मुलाक़ात सितम्बर 1999 में हुई थी, जब मैं मास्को विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्रोफ़ेसर बोरिस जाखारयिन के साथ छठे विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लेने के लिए लन्दन गई थी। दिव्या जी ने बड़ी हार्दिकता के साथ लन्दन में हमारा स्वागत किया था और बड़ी विनम्रता के साथ हमारे सामने यह प्रस्ताव रखा था कि हम लोग अगर चाहें तो अपने लन्दन प्रवास के दौरान उनके घर में रुक सकते हैं । तब हम क़रीब एक हफ़्ता लन्दन में रहे थे। इस एक हफ़्ते के अरसे में हम दिव्या जी के साथ पूरी तरह से घुल-मिल गए थे। उस एक हफ़्ते में हम उनकी मेहमाननवाज़ी और दोस्ताना अंदाज़ के क़ायल हो गए। पूरे सप्ताह उन्होंने हमें ज़रा भी तकलीफ़ नहीं होने दी। उस वर्ष लन्दन में हमें जिन दूसरे भारतीय लेखकों से मिलने का सौभाग्य मिला था, उनमें अचला शर्मा, उषा राजे सक्सेना, कीर्ति चौधरी, कैलाश बुधवार, डा. कृष्ण कुमार और डा. पद्मेश गुप्त के नाम उल्लेखनीय हैं।

लन्दन में रहकर हमने भारतीय आप्रवासी परिवारों के रहन-सहन का जायजा लिया। हमने देखा कि कैसे विदेश में रहने के बावजूद भारतीय लोगों ने अपनी भावी पीढ़ियों के लिए अपनी रीति-रिवाजों, अपनी परम्पराओं, अपने भारतीय इतिहास, भारत की संस्कृति और अपनी मूल भाषाओं या मातृभाषाओं को सुरक्षित रखा हुआ है और उन्हें आनेवाली पीढ़ियों को सौंपा जा रहा है। बच्चों को भारतीय संस्कारों में ही दीक्षित किया जा रहा है। अपनी मातृभूमि, अपने भारत से दूर रहने के बावजूद सभी भारतीय आप्रवासी भारत के साथ नाभिनालबद्ध हैं।

बाद में दिव्या जी की कहानियाँ पढ़कर हमें उन सामाजिक, पारिवारिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं के बारे में भी जानकारी मिली, जिनका सामना विदेश में यानी ब्रिटेन में रहते हुए इन आप्रवासी भारतीय परिवारों को लगातार करना पड़ता है। विदेश में रहकर भी भारतीय आप्रवासी अपनी भारतीय मानसिकता से मुक्त नहीं हो पाते।

इसके क़रीब पाँच साल बाद जुलाई 2004 में हमने मास्को में भारतीय भाषाओं और संस्कृति का अध्ययन करने वाले अन्तरराष्ट्रीय संगठन इकोसाल की ओर से एक अन्तरराष्ट्रीय कांफ्रेंस कराई थी। लन्दन से इस कांफ्रेंस में भाग लेने के लिए बहुत सारे लोग आए थे। जय वर्मा अपने पति के साथ आई थीं। उषा राजे सक्सेना भी इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए मास्को आई थीं। इनके अलावा दिव्या माथुर अपने बेटे के साथ मास्को आई थीं। यह हमारी दूसरी मुलाक़ात थी। इस मुलाक़ात में हम एक-दूसरे के और क़रीब हो गए थे और एक-दूसरे को ज़्यादा गहराई से जानने लगे थे।
तब तक हमने उनकी कहानियाँ पढ़ ली थीं और उनकी कुछ कहानियों को मास्को विश्वविद्यालय के बीए हिन्दी के कोर्स में पढ़ाने भी लगे थे। उनकी एक कहानी है - अन्तिम तीन दिन। यह कहानी हिन्दी पढ़ने वाले हमारे रूसी छात्रों को बेहद पसन्द है। हर छात्र इस कहानी को अपने ढंग से समझता है। लातिनी में इस कहानी के मुख्य विषय को 'मेमेन्तो मोरी' कहा जाता है यानी अपनी मौत का दिन याद रखो। संक्षेप में बताएँ तो इस कहानी की नायिका को अचानक यह मालूम होता है कि उसके जीवन के, बस, तीन दिन और बाक़ी हैं। हर युग में विभिन्न उम्र के लोगों को विभिन्न स्थितियों से होकर गुज़रना पड़ता है, जिनमें से एक स्थिति 'मौत' के दिन' की भी होती है। और जब किसी को अचानक मौत सामने खड़ी दिखाई देने लगती है, तो तरह-तरह के ख़याल उसके मन में उमड़ने-घुमड़ने लगते हैं, जैसे मेरी योजनाओं और परियोजनाओं का क्या होगा, मेरे पास जो सामान है, उसका क्या होगा, भविष्य में क्या लोग मुझे याद रखेंगे ? क्या मेरी मौत को भी लोग, ख़ासकर क़रीबी लोग एक सहज मृत्यु मानकर स्वीकार कर लेंगे। इसी तरह के सवाल 'अन्तिम तीन दिन' कहानी की नायिका के मन में भी सिर उठाते हैं — क्या मैंने अपना जीवन ठीक ढंग से जीया है? कुछ ऐसे सवाल भी हैं, जो सम्भवतः सिर्फ़ औरतों के मन में ही उठते हैं, जैसे — जब मेरे नातेदार, मित्र-सम्बन्धी और क़रीबी लोग मुझे अन्तिम रूप से विदा देने के लिए आएँगे, तब मैं कैसी लगूँगी? कुछ ऐसे सवाल भी हैं, जो सिर्फ़ हिन्दुओं के मन में उठते हैं। हिन्दू पुराणों में कुल चौरासी लाख योनियाँ बताई गई हैं। अब मरने के बाद मेरा पुनर्जन्म किस योनि में होगा? कहानी का अन्त बड़ा मज़ेदार है: नायिका को पता लगता है कि भारत में किसी को उसकी मदद की ज़रूरत है और वह तुरन्त भारत जाने का फ़ैसला कर लेती है। कुल मिलाकर मौत का यह विचार नायिका के लिए एक दुःस्वप्न बन जाता है और वह जीवन का सच्चा और वास्तविक मूल्यांकन करने लगती है। फ़ारसी के कवि उमर ख़ैयाम के ये शब्द याद आते हैं — जो मरने वाला है, वो जानता है कि वो जीवित है।
यह कहानी पढ़ने के बाद हमारे रूसी छात्र दिव्या माथुर की दूसरी कहानियाँ भी पढ़ना चाहते हैं और उनका रूसी भाषा में अनुवाद करना चाहते हैं। दिव्या माथुर की कहानियों की भाषा बेहद सहज और सरल है। हमारे यहाँ अभी तक सिर्फ़ बीए के तीसरे वर्ष के छात्र ही दिव्या माथुर की कहानियाँ पढ़ते रहे हैं। अब हम बीए के दूसरे वर्ष के छात्रों को भी उनकी कहानियाँ पढ़ाना चाहते हैं। ये कहानियाँ भारत का अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए विशेष महत्त्व रखती हैं क्योंकि इनमें न सिर्फ़ भारतीय आप्रवासियों के जीवन की उन समस्याओं को उठाया गया है, जिनसे उन्हें क़दम-क़दम पर जूझना पड़ता है, बल्कि इनमें वे समस्याएँ भी उभरकर सामने आती हैं, जिनका सामना हर मनुष्य को कहीं न कहीं करना पड़ता है, चाहे उसकी राष्ट्रीयता, जाति, रंग और भाषा कोई भी क्यों न हो। दिव्या माथुर की रचनाओं में जो मनोवैज्ञानिक संघर्ष उभरकर आता है, वही पाठक के लिए थाती बन जाता है और उसे हमेशा के लिए बाँध लेता है।

कमाल की बात है कि साहित्य रचने के अतिरिक्त दिव्या माथुर सामाजिक गतिविधियों के लिए भी समय निकाल लेती हैं। वे `वातायन' संस्था की संस्थापक हैं; भारत और डायस्पोरा दोनों के लेखकों और की बेहतर समझ के लिए नियमित शनिवार की बैठकों का बहुत महत्व है।

अन्त में हम कहानीकार, कवि और रचनाकार के रूप में दिव्या माथुर के यशस्वी होने की कामना करते हैं और यह अभिलाषा व्यक्त करते हैं कि वे आनेवाले कई दशकों तक पाठकों की प्रिय रचनाकार बनी रहें और अपनी नई-नई रचनाएँ उन्हें उपहार में देती रहें।

ल्युदमीला खोख्लोवा
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय भाषाशास्त्र विभाग,
एशियाई और अफ्रीकी अध्ययन संस्थान,
मॉस्को स्टेट यूनिवर्सिटी
मॉस्को,रूस

दिव्या माथुर की कविताओं में मानवीय चेतना के संघर्षों की आँच

कल्पना मनोरमा
अध्यापक व लेखक
नई दिल्ली,भारत

कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में एक स्थापित हस्ताक्षर दिव्या माथुर समकाल की चर्चित कवयित्री भी हैं। नई कविता की टकराहटें हों या छंदबद्ध गीतों की मधुर तानाकशी, छोटी बड़ी बहर की ग़ज़लें या नज़्में, उनके अपने मौलिक व भावनात्मक बिम्ब-प्रतीक पाठक-मन को सहजता से आंदोलित करने में सक्षम हैं। उनके सात कविता संग्रह: 'अंतःसलिला','रेत का लिखा', 'ख़याल तेरा', '11 सितम्बर: 'सपनों की राख तले', 'चंदन पानी', 'झूठ, झूठ और झूठ', 'हा जीवन हा मृत्यु' (ई-संग्रह) और 'सिया-सिया' (बाल-कवितायें) जैसी कृतियों में संग्रहित कविताओं को पढ़कर खुरदुरे यथार्थ के सत्य को आच्छादित होते हुए देखा और महसूस किया जा सकता है।

दिव्या जी की कविताओं को पढ़ते हुए उनकी सहजता स्वत: पाठक के मन को छूती है। उनकी गद्य व पद्य लेखन में भारत कहीं व्यंजनात्मक ढंग से मुखरित हुआ है, कहीं अभिधा और कहीं लाक्षणिक रूप से परिलक्षित दिखता है।
'चन्दन पानी' संग्रह के प्राक्कथन में मशहूर लेखक और राजनयिक डॉ पवन वर्मा लिखते हैं: रिश्तों पर आधारित रचनाओं के इस संग्रह में कोई ऐसा रंग नहीं है जिसे दिव्या पकड़ने में सफल न रही हो।
दरअसल दिव्या माथुर की रचनाओं में जो जीवन है वह भारतीय मूलक है। भारत की जीवन विधि और परंपराएं परदेश जाकर भले विच्छिन्न हो गयी हों लेकिन धर्म, दर्शन, अध्यात्म, नैतिकता, इतिहास, पुराण, सामाजिक उत्सव, पर्व-त्योहार, मनोरंजन और ज्ञान-विज्ञान सब की अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में भारतीय रूप से सहज व्याप्त है। दिव्या जी सात सागरों के पार रहते हुए भी अपनी आवश्यकतानुसार उसी प्रकार उक्त तत्वों के साथ अपनी जीवन कविता में प्रस्तुत हुईं दिखती हैं जिस प्रकार एक सुचारु रूप से भारत में रहने वाला कवि दिखा सकता है।

अंत में, एक महत्वपूर्ण बात अवश्य जोड़ना चाहूंगी और वो है दिव्या जी की रचनाओं में लोकप्रिय मुहावरों का बाहुल्य, विशेषतः 'ख़याल तेरा' संग्रह में तो उन्होंने अद्भुत प्रयोग किये हैं, उदाहरणतः 'है वहम मुझे आया भी था / ऊँठ के मुंह में ज़ीरे सा / आज मुझे बहला न सका / क्यूं पूरी तरह ख़याल तेरा।'धत से भाग लिया,'रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में: "कविता ही हृदय को प्रकृत दशा में लाती है और जगत के बीच क्रमशः उसका / अधिकाधिक प्रसार करती हुई / उसे मनुष्यत्व की उच्च भूमि पर ले जाती है।" इस अभेदी कठिन वक्त में भी दिव्या माथुर सहज ही विपन्न यथार्थ को कविता में विश्सनीयता के साथ प्रस्तुत कर रही हैं।

दिव्या माथुर की सम्पादकीय प्रतिभा

तितिक्षा दण्ड शाह
बर्मिंघम, यूके

मेरी प्रिय और पुरानी मित्र, पदमभूषण डॉ मोटूरि सत्यनारायण पुरस्कार और वनमाली प्रवासी कथा सरीखे पुरस्कारों से सम्मानित, प्रतिष्ठित लेखिका, दिव्या माथुर एक बहुआयामी व्यक्तित्व हैं, जिनकी प्रतिभा से पाठक अनजान तो नहीं पर पूरी तरह से परिचित भी नहीं हैं। सर्वप्रथम तो मैं यह अवश्य कहना चाहती हूँ कि नेहरू-केंद्र-लंदन और भारत के उच्चायोग में वरिष्ठ अधिकारी के रूप में उन्होंने अपने को सदा नेपथ्य में रखा और दूसरों को आगे बढ़ाया, मीडियोकर मान कर जिन लेखकों और कलाकारों की अवहेलना कर दी जाती थी, उन्हें गुमनामी में खोने नहीं दिया; उनमें से कुछ आज सफल आर्टिस्ट्स हैं, लेखक हैं। यही एक बड़ा कारण रहा उनकी सम्पादकीय गतिविधियों के पीछे भी। नई प्रतिभाओं को मंच देने के लिए उन्होंने 2003 में वातायन की स्थापना भी की। वातायन से जुड़े लेखक अपनी रचनाओं को प्रकाशित हुआ देखना चाहते थे और नए लेखकों को, जैसा सभी जानते हैं, सम्पादक और प्रकाशक दोनों ही घास नहीं डालते तो ऐसे व्यथित प्रवासी लेखकों को प्रकाशित करने का बीड़ा दिव्या ने उठाया, अनुवाद किए और करवाए। दिव्या अपना लिखना पढ़ना छोड़ कर सम्पादन जैसे थैंकलेस और अवैतनिक काम में जुट गईं। उनकी मुख्य विशेषताओं में एक है उनकी सम्पादकीय प्रतिभा तो आज मैं उनके इसी आयाम पर अपनी बात रखना चाहती हूँ, तफ़सील से।

तो शुरुआत हुई विदेश में बसी भारतीय महिलाओं की कहानियों के अँग्रेज़ी से हिंदी में अनुवाद से, जो Odyssey-1 और ओडिस्सी-2 के रूप में प्रकाशित हुईं, आमुख लिखा रुख़साना अहमद ने, अनीता देसाई, मेहरुन्निसा परवेज़, प्रतिभा रॉय, उषा प्रियंवदा, डॉ सूष्म बेदी और नबोनीता देव-सेन जैसी प्रतिष्ठित लेखिकाओं के साथ उन्होंने नई और उभरती हुई प्रवासी लेखिकाओं को भी स्थान दिया। साथ ही साथ, उनके सम्पादन में दो खंडो में प्रवासी कवियों की रचनाएं: तनाव, के रूप में सामने आईं।

दिव्या जी द्वारा संपादित अगले कहानी संग्रह 'आशा: Translated Short Stories by Indian Women Writing in Hindi ' का आमुख लिखा प्रसिद्ध ब्रिटिश लेखिका और लोकोपकारक ज़रबानु गिफ़्फ़ोर्ड ने, इसमें शामिल थीं: मन्नू भंडारी, शिवानी, मृदुला गर्ग, मेहरुन्निसा परवेज़, अलका सरावगी, चित्रा मुद्गल, मृदुला सिन्हा, प्रतिभा रे, सुधा अरोड़ा, सुनीता जैन, आदि।

आर्ट्स कॉउन्सिल द्वारा दो पुस्तकों के सम्पादन के लिए दिव्या माथुर को मनोनीत किया गया और वह एक बार फिर प्रवासी भारतीय लेखिकाओं की ओर लौटी और संग्रह 'देसी गर्ल्स' में उन्होंने भारत के विभिन्न प्रांतों में जन्मी फिर कनाडा, डेनमार्क, नार्वे, इंग्लैंड, अमेरिका और संयुक्त अरब अमीरात आदि देशों में जाकर बसने वाली 22 लेखिकाओं की कहानियाँ संकलित कीं; ऐसी लेखिकाएँ जो उच्च शिक्षित और अपने काम के क्षेत्र में अनोखी उपलब्धियों को प्राप्त करके भी अपने रहन-सहन में अपनी परम्पराओं व मर्यादायों को निभाते हुए अपनी 'देसी' छवि का आभास देती हैं । इसका प्राक्कथन लिखा लेडी मोहिनी केंट ने: 'ऐतिहासिक रूप से, यह कई सदियों के लिए एक आदमी की दुनिया रही है, महिलाओं के लिए खुद को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करना कभी आसान नहीं रहा, फिर भी महिला-लिब के बाद से पाँच दशकों में इस आंदोलन ने काफ़ी प्रगति की है।'
इस पुस्तक का भव्य लोकार्पण नेहरू केंद्र-लंदन में 16 जुलाई 2015 के दिन प्रसिद्ध अभिनेत्री सैरा माइल्स और बैरोनेस फ्लैदर द्वारा किया गया। इस संकलन में अचला शर्मा, अनिल प्रभा कुमार, दिव्या माथुर, अंशु जोहरी, अर्चना पैन्यूली, अरुण सबरवाल, चाँद शजैल, कादम्बरी मेहरा, इला प्रसाद, नीना पॉल, पूर्णिमा वर्मन, पुष्प सक्सेना, शैल अग्रवाल, स्नेह ठाकरे, सुदर्शन प्रियदर्शनी, सुधा ओम ढींगरा, सुषम बेदी, तोषी अमृता,

उषा राजे सक्सेना, उषा वर्मा, वायु नायडू और ज़किया ज़ुबैरी की कहानियाँ शामिल हैं।
आर्ट्स कॉउन्सिल द्वारा प्रायोजित दूसरा संग्रह था 'नेटिव-सैंट्स वतन की ख़ुशबू' जिसका सम्पादन दिव्या जी ने युद्ध स्तर पर किया। यूके के भारतीय लेखकों की हिंदी, पंजाबी व उर्दू कविताएँ अंग्रेजी अनुवाद सहित' का सम्पादन दुस्तर था क्योंकि इस प्रोजेक्ट में उन्हें कवियों के अतिरिक्त अनुवादकों और संपादकों से भी ताल मेल बैठाना था। मेरे सह-संपादक थे डॉ हिलाल फ़रीद और साक्षात्कार लिए शिखा वार्ष्णेय ने। इस संकलन में शामिल हैं स्वर्गीय डॉ गौतम सचदेव और स्वर्गीय डॉ सत्येंद्र श्रीवास्तव, प्राण शर्मा, शैल अग्रवाल, उषा वर्मा, उषा राजे सक्सेना, डॉ इंदिरा आनंद, जय वर्मा, तोशी अमृता और दिव्या माथुर (हिंदी), अमरजीत चंदन, जगतार ढा, जसविंदर मान, के.सी. मोहन और डॉ साथी लुधियानवी (पंजाबी), अकबर हैदराबादी, इफ्तिख़ार आरिफ़, साक़ी फ़ारूक़ी, सिद्दीका शबनम और ज़ेहरा निगाह (उर्दू)। अनुवादकों में शामिल है रोगर वुल्फ, डॉ पवन वर्मा, डॉ ज़िया शकेब, जूलिया कैस्टरटन, युट्टा ऑस्टिन, डॉ सैफ़ महमूद, ललित मोहन जोशी, शैली विलियम्स, चाँद शज़ेल, नीलम सिंह, आर.के अग्निहोत्री, पारस आनंद, भूपेन्द्र परिहार, बैरिल धंजल, ज़हरा साबरी, सईदा हमीद, अमीना यक़ीन, फ्रांसिस प्रिचैट, रफ़ी हबीब, ब्रेंडा वाकर और स्वयं दिव्या माथुर।
28 जुलाई, 2016 के दिन नेहरू केंद्र में आयोजित इस संग्रह का लोकार्पण भी एक बहुभाषीय, बहुकोणीय और बहुसांस्कृतिक बोनान्ज़ा के रूप में प्रस्तुत किया गया। जिसमें सम्मिलित ब्रिटिश कवि और लेखक, रुथ पडेल, ने कहा, 'इस काव्य संग्रह की बहुरूपता केवल आकर्षित ही नहीं करती बल्कि इसके बहुभाषीय कवियों के अनुभव से नौजवानों को अपने देश के अच्छे-बुरे की सराहना करने में मदद मिलेगी और पश्चिम को एशियाई देशों की कविताओं और संस्कृति का ज़ायका भी मिलेगा। इल्मी मजलिस-लंदन के अध्यक्ष एवं इतिहासकार डॉ ज़िया शकेब, ने कहा कि आप्रवासी कवियों की कविताएँ उनके नोस्टाल्जिया रूप के विविध तत्वों को उनके संस्मरण रूप में दर्शाती हैं, जो कभी नए मूल्यों की

सराहना करते हैं तो कभी वे परिवर्तन से नाराज़ नज़र दिखाई देते हैं। लेकिन उन सभी कवियों की रचनाओं में प्रेम व आध्यात्म के प्रति भी एक दृढ़ता रहती है।
2017 में दिव्या जी ने एक महत्वपूर्ण कहानी संग्रह, 'इक सफ़र साथ-साथ' का सम्पादन किया; जिसमें ब्रिटेन, अमेरिका, कैनेडा, योरोप, स्कैंडिनेविया, चीन और अरब में बसी भारतीय लेखिकाओं की कहानियाँ शामिल हैं। इस संग्रह का आमुख लिखा प्रो फ़्रंचेस्का ऑर्सीनी और अनिल शर्मा जोशी जी ने और वाणी प्रकाशन के श्री अरुण माहेश्वरी जी ने इस संग्रह को अपने प्रतिष्ठित प्रकाशन की चुनिंदा पुस्तकों में स्थान दिया।

हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स-लंदन में इस संग्रह के लोकार्पण पर प्रोफ़ेसर फ़्रंचेस्का ऑर्सीनी ने कहा 'यह प्रवासी हिंदी महिला-कहानीकारों का सबसे बड़ा संग्रह है और इसका पूरा का पूरा श्रेय सम्पादिका को ही जाता जिनके अथक प्रयासों से 'वेस्ट' में बसी इतनी सारी हिंदी महिला-कहानीकार एक ही जगह इकट्ठी हो पाई हैं। इसके ज़रिए हमें उनके सरोकारों और कथा-शैली से रूबरू होने के साथ-साथ जान पाते हैं कि 'वेस्ट' में हिंदी लिखने का क्या मतलब है और आज की तारीख़ में हिंदी में लिख-सोचने वाली 'प्रथम पीढ़ी' की प्रवासी भारतीय महिलाएँ क्या सोच और महसूस कर रही हैं।' अनिल शर्मा जोशी जी ने कहा कि 'यह संग्रह प्रवासी साहित्य की यात्रा में एक विशिष्ट उपलब्धि है, हिंदी साहित्य को प्रवासी महिला कथाकारों के जिस प्रतिनिधि संकलन की तलाश थी, वह यही है।
अंत में मैं, दिव्या माथुर को हार्दिक बधाई देते हुए, केवल यही जोड़ना चाहती हूँ प्रभु उन्हें लंबी उम्र दे और अच्छी सेहत दे ताकि वह ऐसे अच्छे अच्छे काम करती रहें। आमीन

दिव्या माथुर का 'आक्रोश'

रूपर्ट स्नैल

ऑस्टिन-टेक्सास विश्वविद्यालय के हिंदी उर्दू फ्लैगशिप के निदेशक, 35 वर्षों से हिंदी पढ़ा रहे हैं।

नेहरू केन्द्र के एक दूसरे कार्यक्रम के दौरान दिव्या ने मुझसे पूछा कि तुम्हें मेरी किताब पढ़ने का मौक़ा अभी मिला है कि नहीं? अट्ठारहवीं शताब्दी के अंग्रेज़ लेखक रेवरेंड सिडनी स्मिथ के एक प्रसिद्ध कथन के अनुसार, किसी पुस्तक की समीक्षा बड़ा घातक हो सकता है। मेरे दिव्या के आक्रोश से जूझने का परिणाम यह हुआ कि मुझे अहसास हुआ कि दिव्या की दृष्टि में–उसे हम 'दिव्य-दृष्टि' ही क्यों न कहें?–सन्तुलन और समंवय की कोई कमी नहीं है, और जब वे पुरुषों की गतिविधियों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से टिप्पणी करती हैं तो उनके मन में समझदारी और सहिष्णुता है, बदला लेने की आकांक्षा नहीं।

दिव्या जी को मैं बरसों से जानता हूं। नेहरू केन्द्र की भव्य इमारत में हिन्दी की गूंज भी कभी कभी सुनाई देती है तो इसका श्रेय किसी हद तक दिव्या जी को ही जाता है।अनेक रूपों में, अनेक संस्थाओं से जुड़कर, दिव्या की सक्रियता प्रशंसनीय है। दिव्या की यथार्थवादी प्रवृति से स्पष्ट है कि किसी हद तक इन घटनाओं में से कुछ तो निजी अनुभव पर अवश्य आधारित होंगी।किप्लिंग साहब को ग़लत सिद्ध करने वाला पूर्व और पश्चिम का सहज मिलन यहां इन्हीं पृष्ठों में हो ही जाता है।इन कहानियों में वे पाएंगे पति-पत्नी के रिश्तों की दुखप्रद समस्याएं, यौन-सम्बन्धी झंझटों का खुला अंवेषण, गर्भ-पात जैसे भयंकर कांडों का यथार्थवादी वर्णन।लेखिका किसी चीज़ या भावना या विचार से मुकरती नहीं; किसी चीज़ या भावना या विचार से डरती नहीं। कहानियों में एक विशेष सम्प्रेषणीयता है; आपको ऐसा प्रतीत होगा कि आप एक वास्तविक दुनिया में प्रवेश कर रहे हैं।

आक्रोश में केवल आक्रोश ही नहीं है, इसमें भावों और भावनाओं और संभावनाओं की एक विविधता है, इनके लेखन में वज़न है, पर भारीपन नहीं। यहाँ 'सांप-सीढ़ी' कोई बच्चों का खेल नहीं है, एक बड़ी ही मार्मिक और हृदय-स्पर्शी कहानी है।

मैं दिव्याजी से, जो दो मायनों में अपनी एक विशष्ट शैली की जननी हैं, अपना आभार व्यक्त करना चाहूंगा – मुझे आपने अपने आक्रोश को दिल से महसूस करने का मौक़ा दिया।

जब आप जंग पे निकली थीं

जब आप जंग पे निकली थीं, अस्पताल को
मेरे बाग़ में फलों से
भरा एक दिव्य वृक्ष है,
वृक्ष यह वृक्ष
मेरे बाग़ की
मुस्कुराहट है;
मुस्कुराहट यह मुस्कुराहट
जा रही है कल अवकाश पर!
अवकाश उस अवकाश पर
जहाँ सँवारा जाएगा
मेरे पसंद की मुस्कुराहट की शाख़ को,
शाख़ उस शाख़ को
जिसे घायल किया है
प्रकृति के किसी सांप ने!
सांप यह सांप
नहीं जानते,
इनके डंक डरा ही सकते है
कुछ शाख़ों, कुछ फलों को
कुछ कलियों कुछ फूलों को
पर ऐसे मुस्कुराते पेड़ों की
जड़े होती हैं
जड़े वह जड़ें,
जो पालती है साँपो के समूह को
ओढ़ कर अक्सर चंदन का दामन!
फल, फूल, कलियाँ, ख़ुशबू
जिस वृक्ष का स्वभाव हो,
स्वभाव उस स्वभाव
में रहती है बहती है
ताक़त,
ताक़त वह ताक़त
अंतर्मन की ताक़त
हराएगी यह ताक़त
हर उस ज़हर को
जिसकी नज़र में
मेरे बाग़ के वृक्ष की
मुस्कुराहट है!
मुस्कुराहट यह मुस्कुराहट
जल्द ही लौटेगी
अवकाश से;
मेरी, आपकी, हम सबकी मुस्कुराहट;
मुस्कुराती है जिससे
हमारी लेखनी
मुस्कुराती है जिससे
हमारी कृतियाँ
हाँ....
मुस्कुराता है जिससे
वातायन परिवार!
(दिव्या जी को समर्पित जब आप जंग पे निकली थीं, अस्पताल को)

पद्मेश गुप्त

लन्दन
साहित्यकार, डायरेक्टर ऑफ़
ऑक्सफ़ोर्ड बिसनेस कॉलेज.

वह ध्रुव है!

पुष्पा बालकृष्ण
कवियत्री और दिव्या माथु

क्षितिज के छोर से
एक तारा
सरक कर आ छिपा
धरती के आँचल में
उसे ललचाया था शायद
धरती की सोंधी सुगंध ने
उसे उकसाया था कि
वह अपनी नन्ही रौशनी से
लोगों को
दिशाभ्रम होने से बचाए
वह रौशनी उसके साथ चलती रहे, चलती रहे
बढ़ने की उमंग के साथ
प्रेरणा देती रहे
उन सभी को
जो हार बैठे हैं
जीवन की उलझनों से और
उलझनों का क्या?
वो तो होती ही हैं
डराने धमकाने के लिए
किन्तु क्या कभी किसी ने
ध्रुव तारे को हटते देखा है
अपनी लीक से
नहीं न
वह तो बस ध्रुव है
डटा है, डटा ही रहेगा!

(दिव्या जी के जन्मदिन पर उनकी बड़ी बुआ की कविता)

दिव्या माथुर की रचनाओं पर प्रतिष्ठित लेखकों की चुनिंदा प्रतिक्रियाएं

दिव्या की कहानियों में एक तरफ़ औरत की परजीविता और यथस्थिति का यथार्थ है तो दूसरी तरफ़ संस्कार जनित संवेदनाएं। उनके लेखन में कहीं भी कथ्य या भाषा का आडम्बर नहीं है। अपने देश से दूर रहते हुए भी उनके पास भारतीय यथार्थ और संस्कार की पूंजी सुरक्षित है।

-कमलेश्वर

दिव्या माथुर रचनाएं प्रवासी जीवन का प्रामाणिक दस्तावेज हैं, इतिहास हैं। प्रवासी साहित्य की सभी विशेषताएं जैसे मूल्यगत द्वंद्व, रेफरेंस प्वाईंट के रूप में भारत का सतत प्रयोग, भारत को लेकर नोस्टेल्जिया, पश्चिम सोच की फ्रेंकनैस, सभी कुछ तो है इसमें; ये कभी नदी की तरह सीधी, टेढ़ी और कभी धीरे चलती हैं तो कभी वेगवान हो चट्टानों से टकराती, शोखी में इतराती सी; तो कभी हवा के मानिंद अपनी सुगंध से परिवेश को सुगंधमय कर देती हैं। ये विषयों को चुन कर सायास नहीं लिखी गई हैं; ना ही ये पश्चिमी साहित्य का बैकयार्ड है। यह ब्रिटेन में भारतीयों के तेजी से दौड़ते जीवन का वस्तुनिष्ठ अंकन है।
-अनिल शर्मा 'जोशी'

दिव्या की कहानियों के विषय और पात्र आज की सिकुड़ती और उलझती हुई दुनिया की उपज हैं जिसमें अतीतजीवी या भावुक होने की गुंजाइश न के बराबर है. इसलिए उनमें विसंगतियों को एक दबी मुस्कान के साथ देखने और स्वीकार करने की क्षमता है. यही ख़ूबी उनकी कहानियों की भाषा में एक निस्संग भाव और 'विट' लाती है।
-डा अचला शर्मा

दिव्या की कहानियों में एक तरफ़ औरत की परजीविता और यथस्थिति का यथार्थ है तो दूसरी तरफ़ संस्कार जनित संवेदनाएं। उनके लेखन में कहीं भी कथ्य या भाषा का आडम्बर नहीं है। अपने देश से दूर रहते हुए भी उनके पास भारतीय यथार्थ और संस्कार की पूंजी सुरक्षित है। दिव्या जी जब पुरुषों की गतिविधियों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से टिप्पणी करती हैं तो उनके मन में समझदारी और सहिष्णुता है, बदला लेने की आकांक्षा नहीं। किप्लिंग साहब को ग़लत सिद्ध करने वाला पूर्व और पश्चिम का सहज मिलन इनकी कहानियों में हो जाता है।

-रूपर्ट स्नैल

दिव्या के लेखन में भारतीय दृष्टि है।
-डा गंगा प्रसाद विमल

दिव्या एक बेहतरीन कहानीकार और कवि हैं जिनका दुर्भाग्यवश अब तक सही मूल्यांकन नहीं हो पाया है; विदेशों में बसे कई अच्छे कहानीकारों की तरह ही, उन्हें भी 'प्रवासी कहानीकार' के चौखटे में फिट कर छोड़ गया है। अपने प्रचार प्रसार से विलग, वह देश विदेश में बसे लेखकों और कलाकारों के प्रोत्साहन में संलग्न रहती हैं; यह उनके विशाल हृदय का प्रमाण है, जो उनके लेखन में प्रचुर मात्रा में देखने को मिलता है।
- प्रो. इन्द्रनाथ चौधुरी, टैगोर फ़ेलो, एडिनबरा नेपियर विश्वविद्यालय

दिव्या का वैविध्य भरा रचना संसार अपने बहु-कोणीय और बहुआयामी पाठ के चलते, पाठकीय जिज्ञासाओं को नितांत नए आस्वाद से ही नहीं पूरता बल्कि सर्जना की सघन संवेदना और उसकी दृष्टि संपन्न अभिव्यक्ति के माध्यम से कथा वितान को स्वयं उसके अर्जित अनुभवों से सहज ही तब्दील कर देने की क्षमता रखता है। ऐसा तभी सम्भव होता है जब उसके पाठ का निर्वाह, गत कौशल, कथ्य के ताने बाने को पूरी तार्किकता के साथ अपने में गहरे समोये हुए चले।

-चित्रा मुदगल

प्रवासी रचनाकारों में दिव्या माथुर अलग खड़ी दिखाई देती हैं। उनकी कहानियां केवल घटनाओं, पात्रों और परिवेश की कहानियां नहीं हैं। न उनकी कहानियों में पश्चिमी जीवन का मोह है और न केवल जड़ों से उखड़ने का दर्द है। उनकी कहानी अपने भीतर विचार की शक्ति को संजोती चलती हैं। वे समाज और मनुष्य के सम्बन्धों की गहनता और जटिलता की व्याख्या करने का काम करतीं हैं। विचार उनकी कहानियों के केन्द्र में रहता है।
-असगर वजाहत

दिव्या माथुर में मौलिकता के साथ जीवन को नई दृष्टि से चित्रित करने का कौशल है। उनमें एक बोल्डनैस है, इसी कारण वह 'नीली डायरी' जैसी कहानियाँ लिख सकी हैं। उनमें फैन्टेसी का सौन्दर्य भी है और साथ ही जीवन-यथार्थ की मार्मिकता भी। उनमें अनछुए प्रसंगों तथा अलिखित जीवन-छवियों के चित्रण की और उन्हें प्रेषणीय भाषा में अभिव्यक्त करने की क्षमता है।
-डॉ कमल किशोर गोयनका

दिव्या जी यथार्थ के 'केऔस' या कहें कि उसके बवाल का ठोस चित्रण करती हैं और 'बात बोलेगी हम नहीं' के तो टूक ढंग से अपने कथानक पर केन्द्रित रहती हैं; व्यक्ति की नियति के लिए समाज, व्यवस्था, रूढ़ियाँ, सवर्णवाद, पूंजीवाद, ईश्वरवाद को कोसे जाने की कथा परम्परा से इतर खोद उसके भीतर की बनावट को टटोलती हैं। प्रवासी जीवन का शायद ही कोई सन्दर्भ हो जो इनमें छुटा हो। '2050' कहानी में दिव्या माथुर यांत्रिकता की फंतासी को एक अद्भुत ऊंचाई पर ले गयी हैं।
-संगम पाण्डेय

इंग्लैंड के इंडियन-डायस्पोरा के अंतर्द्वन्द्वों और अंतर्विरोधों से लदे-ठुके अनुभव-जगत को वाणी देने वाली कथाकार दिव्या माथुर ने एक बार फिर से यह सिद्ध कर दिया है कि वह मानवीय संवेदना व नियति के छुए-अनछुए पक्षों को सामने लाने में सिद्धहस्त हैं।
-हरजेन्द्र चौधरी

हिंदी कहानी विधा के वर्तमान में एक बेहतरीन लेखिका हैं; जिनका नाम है दिव्या माथुर; उनकी कहानियों की विशेषता यह है कि वे इनमें भागीदार भी हैं और दृष्टा भी।
-डॉ पवन वर्मा

दिव्या माथुर की कहानियाँ आधुनिक कहानी की एक अच्छी मिसाल हैं।
-प्रो अमीन मुग़ल

दिव्या जो टेक्नीक अपनाती हैं उसमें कहानी सुनाने से हट कर वे कहानी दिखाती हैं।
-तेजेन्द्र शर्मा

दिव्या जी की रचनाओं में मैंने शुद्ध पाश्चात्य का निरादर कहीं नहीं देखा। वहां 'खल' वह है जो अपनी स्मृति और संस्कार से अपभ्रष्ट हो गया है। उनकी 'उत्तरजीविता' नामक कहानी एक मरी हुई चुहिया पर है जिसे पढ़कर मुझे अज्ञेय की 'धैर्य-धन गदहे' पर लिखी कविता याद हो आई। भारत लेखक को एक ऐसी सामर्थ्य देता लगता है जिससे 'बियान्ड रिकॉल' माने जा रहे समय के सामने प्रवासी संवेदना एक आत्मविश्वास के साथ खड़ी हो सकती है।
-मनोज श्रीवास्तवा

दिव्या जी की कहानियों में हम जीवन की भयावह वीथियों से गुज़रते हुए ठोस चीज़ों की प्रच्छायाओं को निस्संदेह अपने भीतर सहेज तो लेते हैं किन्तु जीवन के यथार्थ से साक्षात्कार करने के पश्चात् हम भयमुक्त हो जाते हैं। वह कथोपकथन और संवाद के जरिए समूचे कथ्य का विस्तार करती हैं। इस प्रक्रिया में जीवन की बेहतरी के लिए उनका चिंतन प्रखर रूप में हमारे सामने आता है। उनकी दृष्टि समकाल की विद्रूप परिस्थितियों पर होती है पर उन्हें इस बात का पूरा भान होता है कि उनकी कहानियां सर्वकालिक होंगी। उनका उद्देश्य जीवन में समायोजन और सामंजस्य स्थापित करना होता है तथा इस उद्देश्य में उनकी परिपक्व भाषा-शैली उनके विचारों और भावों की सफल वाहिका बनती है।
- डॉ. मनोज मोक्षेंद्र

बचपन में छिपकर डायरी लिखकर अपनी वर्जित यादों की भड़ास निकालने की आदत से लेखन की शुरूआत और नृत्य, संगीत तथा भूतों की कहानियों के माहौल में पली-बढ़ी दिव्या माथुर के लिए कहानी लिखना एक बाध्यता है। उनकी कहानियाँ भारतीय संस्कारों से जुड़ी होकर भी नौस्टैल्जिया की न होकर जीवन के उन सरोकारों की कहानियाँ हैं जिनसे किसी भी देश या वर्ग के लिए अछूता रहना संभव नहीं। उनकी समस्या अपने परिवेश में स्थापित करने की है न कि पीछे मुड़कर देखने की।
-डॉ अरुणा अजितसरिया एम.बी.ई.

संवेदना और शिल्प के संतुलित प्रयोग से लिखी गई यथार्थवादी कहानी का एक उत्कृष्ट उदाहरण 'बचाव' है। भारतीय और पाश्चात्य संस्कृतियों की मानसिकता को दिव्या जी ने निंदिया के चरित्र में बखूबी से चित्रित किया है, ''उबलते पानी की धार उनकी टांगों के बीच में छोड़'' कर उनकी ज़ोर जबर्दस्ती का प्रतिवाद करने वाली निंदिया एक स्वावलम्बी और स्वाभिमानी स्त्री है, ''बहुत सह लिया बस अब निंदिया और नहीं सहेगी'' में नारी विमर्श की ओजस्वी आवाज़ सुनाई देती है।
-डॉ आशीष कंधवे

दिव्या जी की कहानी, बचाव, के अंत तक पहुंचते-पहुंचते ऐसा लगा कि यदि निन्दिया अपना बचाव न करती तो पाठक की रगें फट जातीं और उनसे रक्त निकल कर हवा में दौड़ने लगता। इस कहानी ने मुझे जिस तरह हिला के रख दिया; जो सिद्धार्थ के रोगी, वृध और मृतक को देखने के बाद इस अर्थहीन देह और संसार से उनके वैराग्य की ओर अभिमुख हो जाने और बुद्ध हो जाने से ज़्यादा नहीं तो उस से कुछ कम भी नहीं है।
-दीपक मशाल, नई क़लम परिवार

मुझे दिव्या माथुर की 'पंगा' कहानी का अंग्रेज़ी में अनुवाद करने में बहुत आनंद आया, मुझे पन्ना की 'धारा-चेतना' पसंद आई जो वास्तव में दिमाग़ में चल रहे ट्रैफ़िक पर प्रतिक्रिया देने जैसा है; पन्ना के अपने पूर्वाग्रह और उसके आसपास के लोगों के बीच तनाव भी बहुत दिलचस्प लगे; कहानी की परतें अगिनत हैं, जो एक के बाद एक खुलती चली जाती हैं और पाठक को बांधे रखती हैं।

-युट्टा ऑस्टिन, जर्मन और हिंदी की वरिष्ठ अध्यापिका

कहानी कहने की कला वह खूब जानती हैं . उनकी कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है – पठनीयता और अनूठी भाषा-शैली; शिल्प की जो बानगी उनकी कहानी के प्रारम्भ में होती है वह अंत तक बरक़रार रहती है।
-प्राण शर्मा

लमही पत्रिका में दिव्या माथुर की कहानी 'गूगल' पढ़ने बैठी; लगा कि यह एक आवारा लड़की की कहानी है, कुछ ही अंतराल के बाद लगा कि यह कहानी 'स्ट्रीट डॉगस' पर आधारित है। कहानी के मध्य तक पहुंची तो मन हिलोरें लेने लगा; अरे, ये कहानी तो एक चुहिया की है, लेखिका की परकाया प्रवेश की संकल्पना अद्भुत है। दो जीवों की गृहस्थी के साथ जो बाज़ारवाद की भयावयता, कामगारों का निठल्लापन और मनुष्यता को बचाने के लिए दी गई बलियों का ब्यौरों ने भावुक कर दिया।
-कल्पना मनोरमा

दिव्या माथुर की रचनाओं पर प्रतिष्ठित लेखकों की चुनिंदा प्रतिक्रियाएं

हिंदी की दुनिया, दुनिया में हिंदी

प्रो फ़्रंचेस्का ऑर्सीनी
भूतपूर्व प्रोफ़ेसर, लंदन विश्वविद्यालय, वरिष्ठ पुरस्कृत लेखिका, साहित्य इतिहासकार।

दिव्या माथुर द्वारा संपादित कहानी संग्रह: 'देसी गर्ल्स' और 'इक सफ़र साथ साथ'यह प्रवासी हिंदी महिला-कहानीकारों का सबसे बड़ा संग्रह है जो आज तक छपकर आया है, और उसका पूरा का पूरा श्रेय सम्पादक/ सम्पादिका दिव्या माथुर को ही देना चाहिए जिनके अथक प्रयासों से "वेस्ट" में बसी इतनी सारी हिंदी महिला-कहानीकार एक ही जगह इकट्ठी हो पायी हैं. इस संग्रह के ज़रिए हमें उनके सरोकारों और कथा-शैली से रूबरू होने के साथ साथ "वेस्ट में" हिंदी लिखने का क्या मतलब है, उसपर भी सोचने का अवसर मिलता है। इसके पहले एक ऐसा ही बढ़िया संग्रह 'देसी गर्ल्स' प्रकाशित हुआ था। इन संग्रहों के माध्यम से हमारा परिचय आधुनिक भारतीय लेखिकाओं और उनकी रचनाओं से हुआ।

ज़्यादातर कहानीकार लम्बे अरसे से लिख रही हैं, और हरेक कथाकार की यहाँ संकलित एक ही कहानी से उनके रचना-संसार की झलक ही मिल पाती है। मगर उन सबको एक साथ इकट्ठा देखकर, एक साथ पढ़कर यह फ़ायदा ज़रूर मिलता है कि हमें यह पता चलता है कि आज की तारीख़ में हिंदी में लिख-सोचनेवाली "प्रथम पीढ़ी" की प्रवासी भारतीय महिलाएँ क्या सोच और महसूस कर रही हैं। उनको पढ़ना दुनिया में बसे हुए हिंदी बोलने और लिखनेवालों की दुनिया में प्रवेश सा करना है।

दिव्या - मानवीय मूल्यों और वैश्विक हिन्दी साहित्य की

अर्पणा संत सिंह
झारखंड,भारत

आज से करीब दो वर्ष पूर्व गृहस्वामिनी की एक ग्लोबल एम्बेसडर ने मुझे दिव्या जी के साथ दो-तीन अन्य प्रवासी साहित्यकारों का नंबर दिया था। मैं उस दौरान हिंदी दिवस के लिए किसी कार्यक्रम का आयोजन करना चाहती थी।मैंने जब भी दिव्या जी को व्हाट्स एप पर संदेश दिया उन्होंने हमेशा यथाशीघ्र और यथाशक्ति सहायता की।

दिव्या जी अपने नाम के अनुरूप ही हैं वह एक ऐसा आलौकिक नाम है साहित्य जगत में जिनकी रोशनी से साहित्य का जो वास्तविक धर्म है कि वह सबको जोड़ता है उसे चरितार्थ कर रही हैं। हिंदी साहित्य को वैश्विक स्तर पर कई वर्षों से समृद्ध कर रही हैं। दिव्या जी के रचना संसार पर किसी प्रकार की टिप्पणी करना उद्दंडता होगी। एक साधारण पाठक के रूप में वह एक सशक्त लेखिका हैं जो अपने लेखनी से आंदोलित करती हैं।

हिंदुओं की मान्यता है कि प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा द्वारा सुनिश्चित कार्य की पूर्णता के लिए जन्म लेते हैं।सृजनात्मक लेखन पर नही लेकिन मेरे व्यक्तिगत अनुभव से यह जरूर कहना चाहती हूं कि स्वार्थपरक कुत्सित मानसिकता ,अहंकार , प्रतिस्पर्द्धात्मक ईर्ष्या और कुंठित आत्मकेंद्रियता के अंधकार को स्नेह, आत्मीयता,सद्भावना और मानवता के आलौकिक रोशनी में परिवर्तित करने वाली दिव्या जी जरूर हैं। इसलिए मैं अक्सर उनसे मार्गदर्शन चाहती हूं और वह जितनी भी व्यस्त रहें मेरे संदेश पर उत्तर अवश्य देती हैं।

स्नेहिल,सौम्य,मृदुल स्वभाव एवं मधुर मुस्कान के पीछे उनका साहस ,संघर्षशीलता और दृढ़ संकल्प है। उन्हीं के शब्दों में -

मैं भी शायद एक चील हूँ

मैं शायद एक चील हूँ
जो एक दर्दनाक मौत से भिड़ंत में
घायल तो बेहद हुई

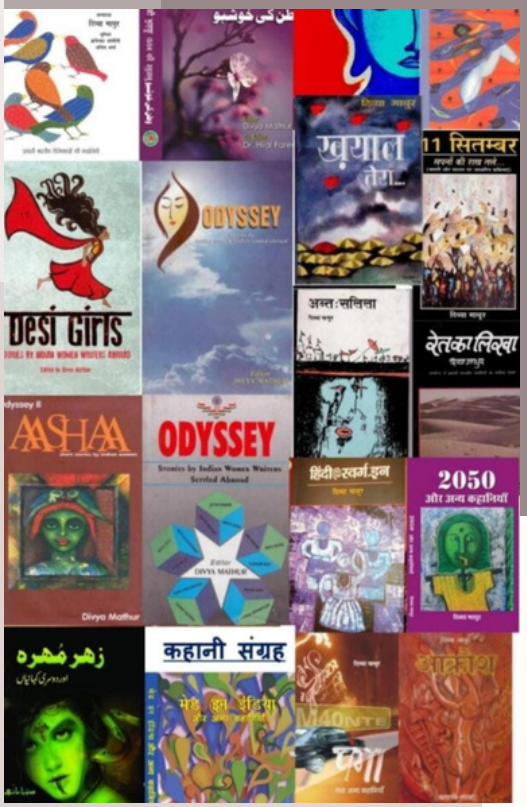

किन्तु बच निकली
जीवित रहने के कौशल को
पुनः सीखती, मांजती
एक बेहतर जीवन के लिए
इस बार बेहतर तैयारी के साथ
फिर जीना है
और फिर मरना है
किन्तु अंतिम बार
निर्वाण के यक़ीन के साथ।

इतने बहुआयामी व्यक्तित्व की स्वामिनी और कई पुरस्कारों से सम्मानित होते हुए भी दिव्या जी में लेशमात्र अहंकार नहीं है।

दिव्या जी एक साहित्यकार और साहित्य सेवी के रूप में क्रियाशक्ति और ज्ञान शक्ति द्वारा हिंदी वैश्विक साहित्य जगत के लिए अनुप्रेरक हैं उनके गुणों की अनुमोदना की जानी चाहिए ताकि दूसरे भी उससे प्रेरित होकर उनका अनुकरण कर सकें। इसलिए गृहस्वामिनी का यह अंक समर्पित है दिव्या माथुर जी को। मैं कृतज्ञ हूँ शिखा वार्ष्णेय जी का जिन्होंने बेहद खूबसूरत और सार्थक कार्य किया हैं और परम आदरणीय रचनाकारों का जिनके रचनात्मक सहयोग के बिना यह विशेषांक अंक पूरा नहीं हो सकता था।अंत में मैं आभार व्यक्त करना चाहती हूं अदिति सिंह का, जिन्होंने गृहस्वामिनी को एक अलग रूप दिया।